अक्ल समाज को उजाले देने वाला पुनीत त्यौहार है
यह प्रह्लाद के अटल विश्वास की प्रतीक है जिसने
अग्नि में जलने की परिस्थिति उत्पन्न होने पर भी
राम नाम पर से अपना विश्वास डाँवाडोल नहीं
होने दिया। चरम सीमा है राम नाम पर विश्वास की।
फल सिद्ध भूतपूर्व नरसिंह अवतार के दर्शन।
इससे तो तेरे जैसे मूढ़ प्राणियों को अटल विश्वास
की शिक्षा लेनी चाहिये। इस आवाज के सुनते ही जाने
की निश्चय की — प्रकृति है यह आवाज मेरी रक्षार्थ
हेतु थी। दो गज़ लोगों ने जगाया उनको वापस भेजा।

२७ जून ८५ — दर्शन प्रातः स्मरण के समय दर्शन मिले श्री
शुकदेव मुनी के — एक क्षण के लिये दृश्य आया
एक हष्ट पुष्ट मुख है जिसके शरीर से तेज आभा निकल
रही है चमचमा रहा है चारों ओर आलोक व्याप्त है फिर
सम्हल कर देखना चाहा तो वह अदृश्य हो गये
प्रणाम नहीं कर पाया।

७ जुलाई ८५ घटना — गत रात्रि अजय के साथ कलकत्ते से रात की ट्रेन से वापस आ रहा था। वंडेल स्टेशन पर गाड़ी खड़ी थी जोर की प्यास लगी थी इतने में एक पानी वाला दीखा उसके करीब एक पात्र पानी मिला वह चला गया प्यास शान्त नहीं हुई। पानी के लिये चारों तरफ देखता रहा इतने में मुझे एक बंधन से एक आदमी पानी की बाल्टी लेकर आया और मेरे सामने खड़े होकर पानी की आवाज लगायी। उसे आवश्यकतानुसार पानी लेकर प्यास बुझाई इतने में गाड़ी चल पड़ी। धन्य हो प्रभो! हमारी आवश्यकता आप की पूर्ति किस प्रकार तत्परता से करते हैं बिना याचना किये ही सम्हाल रखते हैं।

४ सितम्बर ८५ विचार — क्रोध — क्रोध बहुत ही बुरी चीज है पर यही क्रोध जब भगवान के प्रति होता है तब उसे प्रकट होना ही पड़ता है। राक्षसों का मैरी-क्रोध उन्हें निर्वाण दिलाने वाला हुआ और दासों का प्रेमी-क्रोध वश में करके उन्हें बचाने वाला हुआ। जिसका जिसके प्रति

जितना प्रगाढ़ प्रेम होगा उतना ही उसके वियोग में उसके प्रति क्रोध आता है। कभी कभी प्रेम से निहोरा करते करते मन थक जाता है फिर भी मन से दूरी नहीं होता है तब वियोग का मारा हुआ क्रोध का लहरा सेहा है तब वह क्षण में प्रकट हो जाता है।

३ दोसम्बर ८५ **सावधान** - प्रातः प्रातः - स्मरण के समय विचार आया कि नाथ - स्मरण को संख्या में बंध कर आज एक माला प्रभु के साथ निर्माण करना आया मन इसी में फंसा हुआ था कि संख्या कितनी होगी एवं नवधा संख्या पूर्ति के लिये घास काटने लगता उस समय भाव विलीन हो कर कोसों दूर भाग जाता। आज निश्चय किया कि आज भविष्य में संख्या की परिधि के अंदर नहीं हूंगा। जाप को धीरे धीरे स्वर से करूंगा।

२२ दोसम्बर ८५ **निग्रह** - अयुत वृन्दावन के मंदिर में कुबड़ा मूर्ति बड़ी सुहावनी थी मनोहरा बड़ा शान्त था किन्तु

कोई भी मूर्ति मेरे मन और हृदय को नहीं छीन सकी। जहाँ जाता धनुर्धारी शिशु-रूप देखना चाहता था पता नहीं कब कृपा करोगे।

१३ जनवरी ९९ खिन्न पुराने जमाने को छोड़ उससे बड़ा सादा जीवन व्यतीत करते थे किन्तु मीरा के बड़े ठाठ-बाट थे इसी तरह अपने प्यारे के प्रति प्रेम को हृदय में संजो कर रावना उसके प्रेम के नशे में चूर हो यदि उसी आह्लाद में पड़ोगे तो उसे सँजो न सकोगे अपने को खो बैठोगे। नाम अपने कीर्ति बहुत मिलेगी पर मीरा से ठनठनगोपाल।

नाथ जीह लोचन नीर
उर मन शिशु रघुवीर।

२४ जनवरी ९९ अटल बिना याचना किये ही आज दोपहर तीन बजे तुमने कपाल दिखाया। मैं तेरी शान्ति भंग नहीं करना चाहता था पर तेरा दास अपूर्ण मन अशांतु बहाने फिर तेरे को पैर नहीं। धन्य हो प्रभो इस ज्ञान की शक्ति शरद जाड़ा त्यार ग्रहण करना।

अमरावती बलिहारी है तुम्हारी जन-रक्षक! प्रात० ६६
स्तवन के समय मैंने यह बन्दी-गृह से
तुम्हें सौ गृहस्थ में रहते हुए गृहस्थ-बंधन से
मुक्ति देते जा रहे हो।

६ मई ६६ घटना प्रातः प्रातः को मोटर दुर्घटना में राजा
पुरंजय को चोट आई। दुर्घटना इतनी भयानक
रूप में थी कि दोनों भाइयों को जीवन संचार
असम्भव था किन्तु तुमने अपने अद्भुत संयम
से दोनों की रक्षा कर ली। "तुम से बड़ा
डरता है प्राणी हरि के हाथ हजार है"।

१२ मुकुल ६६ विनय - तू गाया नहीं, रूठ रहा है। मानता कि गगन
सब जितनों को सूने सारा है उन सबसे बहुत ही अधिक
आलोकमय है किन्तु तू मोती एक से एक बढ़ कर
कलियों को लगते लगते अपने को अभ्यस्त करता
जा रहा है। मैं अपनी दुर्बलताओं को नहीं छोड़ता
तो क्या तू ही अपनी साधना की अबाधता को छोड़ देगा
यदि अबाधता छोड़ना ही चाहता है तो नश्वर की अबाधता

धैर्य और मुझे दर्शन देकर अपने नाम-महिमा की
लज्जाने की सूचि में एक नाम और जोड़ लें। जीभ,
कान, हिये, आँखों और मन पर और हर श्वाँस का
अपना अहर्निश पहरा बैठा है ताकि कोई कुसार यहाँ
फटक न पाये। नालायक से अयोग्य दर्जे का बेशक हूँ
हो किन्तु सालायक बनने लायक अयोग्य दर्जे का
तेरा नाम ही है।

२ नवम्बर निरंजन - ऐसी सद्बुद्धि एवं शक्ति प्रदान कर ताकि मेरे
६६ पास आने वाला हंसता हुआ प्रसन्न होकर ही जाय
ताकि उसकी प्रसन्नता में मेरी मलक देख सकूँ।

३ नवम्बर निरंजन - प्रायः कहा जाता है "लोहे की तरह नाम ले
६६ से क्या लाभ" लेकिन यह धारणा यदि सही होती तो
उल्टा नाम जपकर नालिक न बन जाता। सोने की तो
बेड़ी मधुर है किन्तु यदि शब्दों की भी आवाज में अपना
लट्ठ मारने वाली बेड़ी में भी राम नाम को निश्चित
समय पर किन्तु नियमित रूप से नित्य उच्चारण किया
जाय तो मन का सदुपयोग होते हुए भी यह नाम

रत्न मात्र ही रहते हैं, इसी प्रकार मानव जीवात्मा जिस तरह गुरु की कृपा और जाती हुई कर्म की कृपा से कुछ तो चीरती ही जाती है उसी तरह यह नाम मात्र के शरीर उपस्थित करता जायगा एवं किसी न किसी दिन तो यह नाम उपयोगी को अवश्य ही दिखलायगा ही दिखलायगा किन्तु इसके लिये सभी को भाँति सजग करना होगा, प्रयास लगाये रखना होगा, इसी प्रकार विश्वास के ही बल पर इस ~~कर~~ कंटीले पथ पर उठाने पथिक बढ़ा हूँ।

१४ दिसम्बर ६६ विनय— प्रभु के लिये जिज्ञासा रुचि की ग्रन्थ के लिये कर्ण ने जिस प्रकार सहायता ग्रहण की थी, इसी प्रकार कोई न कोई उपाय ही इस पथ पर चढ़ाने का सहारा देता है और उस पथिक को उस पुरुष का कृतज्ञ होना चाहिये।

१४ दिसम्बर ८८ सत्संग – श्री मद्भागवत सप्ताह यज्ञ के प्रमुख यजमान श्री राधागोविन्द जी के यहाँ –

कष्ट – कुन्ती ने कृष्ण से माँगा कि संसार का सबसे बड़ा कष्ट दान मिलता है ताकि उससे पार लगाने के लिये सदैव कृपा मिलती है।

शुद्धि – भगवत भजन के लिये बाह्य शुद्धि अनिवार्य नहीं

आहार – शुद्ध एवं सात्विक आहार साधक के लिये उत्तम है अंगुली – जीव को ईश्वर एवं जगत्कृपा।

जड़ भरत – जाल मृग का ऐसा बाल बांधे ताकि वह बाले अपूर्ण है ताकि बंधन में न पड़ना पड़े। प्रभु जो कराये सो ठीक है।

नाद और नाभी – नाद और नाभी एक हैं। निष्काम जप करो के लिये ध्यान, बाह्य शुद्धि आदि की अनिवार्यता नहीं पड़ती।

सुचिरत = संचरत अर्थात उसका चिन्तन।

रजस – जब विषयों से जीव का घटपटा हो या तब ~~सत्व~~ इनकार्ड, इष्टविषयों से मत्सर्य आदि राज जय बत है

अपराधों एवं कुमति को दूर कर ले जाता और उनमें मातृभाव अपने हृदय में एवं उपर से आने वाली पत्र को आँख बाज़ार। मौत को खिलौना मत देख सकोगे हाथ तेरा अंध होगा तुं मुक्ति पात्रता।

भागवत धर्म - अन्य धर्म में मुक्ति मिलने से अनिष्ट वाली भी हो जाते किन्तु भागवत धर्म के पालन से अनिष्ट होता ही नहीं।

अचल भक्ति - अपने इष्ट को कभी भी नहीं बदलो। अपने इष्ट पर अटल विश्वास एवं साधना करो।

धर्म करने वाले को सुख और पापी को दुख - धर्म का फल मिले और पाप का अपराध नहीं होना चाहिये। पापी का पूर्व जन्म का संचित पुण्य क्षीण होता होता है और बहुत सुख होने वाला थोड़े में ही रह जाता इसी प्रकार धर्मात्मा का संचित पाप क्षीण होता होता है बहुत कष्ट मिलने वाला था सो थोड़े में ही रह जाता है।

चरन ग्वालन्तोस से ग्वालन्त में मैंने पहली एक सुन्दर (लोक) पुस्तक खाजो लिखे भेजे थे उस्ता ज एवं शान्त ग्वैर मौन हम थी/उस लोक के ग्राते मद श्री मद भागवत सप्ताह का ग्वायोजन हुआ किन्तु सप्ताह में ग्रोते समय तोरे को ग्वालन्तोस में ही छोड़ ग्राये। ग्वाज सप्ताह यज्ञ की समाप्ति शाम को हुई उसके कुछ ही देर बाद ग्वालन्तोस से टेलीफोन ग्राया कि उसे सुबह ग्रचानक ग्रा गया ग्रौर डाक्टर सुकदेव जी को लिखा गया उन्होंने कहा सोता विदा हुआ - सही लीला ग्वालम्बा है।

गुरु नानक - श्री ग्वानन्द स्वामी जी के ग्वादेशानुसार बिना स्नान किये स्वाध्याय करता रहा हूँ किन्तु ग्रब विश्वास गुरु के वचनों पर नहीं कर पाता ग्रौर सोचता ग्वार्य समाजी हूँ इसलिये ऐसे सोच दी है किन्तु ग्रब श्रीमद् भागवत को भी इसी मत की पुष्टि करता देखा (हरगया) गुरु के प्रति ग्वविश्वास के लिये ग्वपने को धिक्कारने लगा - धन्य हो प्रभो।

यह कहता है यूँ – अतः कृष्ण भी तो मेरा हो जाता है।
तो फिर कृष्ण नाम यद्यपि मेरा इष्ट नहीं है तो भी
मंडली के साथ कृष्ण नाम लेने में राधा के प्रति प्रेम
और अनन्यता में फर्क कहाँ आता है कभी कहाँ
आती है। अधिवास कीर्तन तो मेरे बाबा का ही है।
इसके बाद पूरा कीर्तन पूरी रूपरस-माधुरिया
कुछ घण्टों तक करता रहा। विभिन्न दिशाओं से
चित्रपट के शिशु रूप की झाँकियाँ लेता रहा।
तन्मयता आ गयी – सुधा खो गया – अश्रुधारा
बह चली – हिचकियाँ आने लगीं – अपने को
रोक न सका – लोग कई बार भोजन के लिये
बुलाने आया पर इस आनन्द को छोड़ नहीं पाता था
मस्तिष्क में अजीब तरह की गर्मी मालूम होने लगी
पैर लड़खड़ाने लगे। बहुत देर बाद उठना कठिन हुआ।
इसके बीच समय पर मंडली बदली हुई मुझे पता
नहीं – मैं तो अपने प्यारे की मुस्कुराती झाँकी
देखने और मन ही मन बातें करने में मस्त था।

है माता ऐसी सस्ती दौर हाकमे बड़ी कृपा
होगी। गुरुजनों संकीर्तन का प्रभाव। क्यों
गुरुनानक जी, अपनी बिलकारियें सुनावो
न हृदय तड़फता है। कब कृपा करोगे।

२४ जनवरी ६७ निहोरा — घड़ी में जब तक दम रहता है "टिक् टिक्" चलती ही रहती है। इसी तरह जब तक शरीर में जब तक दम (श्वांस) है "माता" की ध्वनि प्रकट या अप्रकट रूप से हर श्वांस निकलती ही रहे ऐसी कृपा कर दो माँ। तेरा निहोरा करता हूँ।

१३ फरवरी ६७ कृपा और छाया — तेरी इच्छा ही माया है जैसे तेरी इच्छा से ही दासों को कृपा मिलती है किन्तु कृपा होते ही माया दूर भाग खड़ी होती है - तेरी ही माया ने तो मोहिनी - शंभु नाटक रच सदाशिव का भी अहंकारिपन का दर्पपन नाश किया। कर्तापन का मिथ्याभिमान नष्ट कर दे। तेरी कृपा ने है इच्छा को माया रूप में प्रीत कर सारे नाटक रचे। जासे कोई शत्रु नहीं है माया सर भागता दूर कर दे।

निहार - यहाँ तक तो पूँलाया - अब कृपा कर दे
एक बार तेरा नाम ले सकूं और उसकी अन्तिम जीवन
धन्य बनी है। कामना और आसक्ति बनी है केवल
तेरे शिशु - चरणों की। - इसका रस पीती है तेरे
नाम - ज्ञान का - नयन तड़पते हैं तेरे दर्शन
के लिये - आँधी मिले तेरे तुम्हु तुम्हु की चाल
से - कान सुनें तेरे पायल की झंकारें
मध्य तेरी शरारत भरी खिलखिलाहटों की -
उष्णता मिले तेरी मधुर मुस्कान की - अभिमान
हो तेरी शरारत का - लोभ हो तेरे सानिध्य का
क्रोध आवे तेरे उपर जब तु इससे अन्यथा
नाच नचाता चाहे। तुम्हु तुम्हु बन अपनी और
चंचलता चला जा इस पलने में चंचल
मन को इसी जन्म में सिद्धि नहीं वरन् जन्म
जन्मान्तरों के। पर याद रहे रावण - एक बार
एक बार अपने शिशु - चरणों की धोवन पिला देना
जुठन मिला देना मिलन बन से जुदा देना। रोग
दिखाती हुआ देने में हिचक और चूक क्यों?

५ मई
८७

उपालम्भ – तू पतित पावन है फिर इस नाम
की सार्थकता के लिये पावन बनाने के लिये
हमें तेरे से ज्यादा पतीत दूसरा विशेषण
कौन। यह हृदय दुर्गन्धपूर्ण है तो क्या हुआ
प्रभो सुगन्धमय बना दे।

रसना से नाद-रस का विंतर पान करने
में प्रवृत्त होवे है – श्रवण तेरे नाद-
नाद को विंतर सुनते सुनते प्रवृत्तयें नहीं-
मग तेरा ही चिन्तन करे – हे रसीले तेरे
ही चर्चन किया करे – लोचन तेरे शिशु-रूप
दर्शन के लिये लालायित रहें जलधार प्रवाहित
बहाते रहें फिर जन तू अपनी शरण को
अब कृपा करने की मन में लावे से तेरे
हे बाल-रूप को अभिनेत्र निरखा करें
हे जन-मन रंजन इतनी सी कृपा कर
इसे निहाल कर दे।

१५ मई ८७ **स्वप्न-दर्शन** कुछ दिन पूर्व - एक लम्बा बहुत लम्बा हाथ मेरी ओर आया धनुष की भाँति खींचा गया है उस प्रहार से डरने वाला हूँ एक तेजस्वी बालक - फिर जलहरी के अन्दर से एक शिवलिंग निकलता है - फिर क्या हुआ याद नहीं - फिर बालक और शिवलिंग अन्तर्धान हो गये" उठने पर प्रातः स्मरण का समय हो चुका था। प्रभो! इस प्रकार छलना बन्द कर प्रकट दर्शन करा कर इस मेरे बालक की प्यास शान्त क्यों नहीं कर देते यह बड़ा भारी वज्र त्रुटि है इस तरह कुछ समझता नहीं।

१७ मई ८७ **गृहस्थ जीवन** अपने प्रियजनों दूसरा दिल को ठेस पहुँचाने वाला व्यवहार - गृहस्थ जीवन का एक बड़ा दुख है और मेरे जीवन में ऐसे अवसर अक्सर आते ही रहते हैं। दुखद विषमता का संदेशा-वाहक है। अतः ऐसी कृपा कर दे कि

जब भी ऐसा प्रसंग आवे इसी समय ले जाकर मानसिक चिंतन प्रारम्भ हो जाय।

२५ मई ८७ साधना — साधक = कन्या।
संत एवं भक्ति-साहित्य = पिता।
मूर्ति या चित्रपट बनाने वाला = भाई।
इष्ट का निश्चय = सगाई।
भगवद्कृपा = विवाह = सिद्धि।

सगुनी साधक उस कन्या की भाँति है जिसका पिता अपने मन-पसन्द वर से मनोनीत कर सगाई कर देता है वर की प्रशंसा के घर में करता है जिसे सुनकर उस कन्या का भाई उसी प्रशंसा के आधार पर ईलाचित्र तैयार कर देता है जिसे वह कन्या इस ईलाचित्र के आधार पर कल्पना करती हुई प्रिय-मिलन की बाट जोहती (इसी को ज्यों ज्यों परिचय-विधि मिलता जाती है उस कन्या

की प्रियतम-मिलन - उत्कंठा बढ़ती जाती है। विवाह होने पर पति से साक्षात होता है तब पति उसका पाणि-ग्रहण कर उसके जीवन का भार सम्हाल लेता है फिर उस कन्या जीवन की सारी चिन्ताएँ शुन्य हो जाती हैं।
इसी तरह सगुणोपासक साधक प्रतिमा या चित्रपट को उपास्य देवी-देवता की मूर्ति जानते हुए भी उस कन्या की तरह लगन लगाये रहता है। साधक और कन्या में फर्क इतना ही है कि कन्या को परिणाय-तिथि पिता निश्चित कर देता है किन्तु यहाँ साधक के लिये कोई तिथि निश्चित नहीं न किन मिलन-उत्कंठा को प्रगाढता को सही रूप में आँकते हुए पति ही परिणाय-तिथि निश्चित करने का भार अपनी ही कृपा से बाँधे रखता है। मिलन प्रसंग के जीवन में सबसे बड़ी भ्रांति बड़ी चूक पूर्व के उपलब्ध मिलन की बार सोचनी पड़ती है

यहाँ तक तो मिलन का ही क्रम है। मिलन के बाद साधक का विवाह होजाता है अर्थात वह सिद्ध होजाता है। इसके पश्चात विरह-प्रसंग प्रारंभ होता है तब ब्रज-गोपी-जीवन का प्रारम्भ होजाता है। मिलन के पूर्व विरह रहता है।

११ जुलाई ८७ **नरम-निर्मल-गंगा** - गत रात्रि मैं स्वप्न में देखा कि मैं गंगा-स्नान करने गया हूँ - घाट बहुत सुंदर है - जल बहुत निर्मल है। उस समय यह भावना प्रबल थी कि गंगा भगवान के चरणों से निकलने के कारण प्रभु का चरणामृत है इससे मेरा उद्धार हो जायगा। इसी भावना से प्रेरित होकर भागवत सप्ताह यज्ञ के बाद से प्रातः स्नान के पूर्व गंगा जल का पान भी करता हूँ। तदुपरान्त प्रातः स्नान के समय इस भावना से जोर से कहा कि इस चरणामृत को पीते पीते यही चरणामृत

अपने उद्धार-स्थल आदि प्रभु-चरणों के दर्शन भी करा देगा। मैं इस दर्शन का अधिकारी तो नहीं हूँ पर उनकी अहैतुकी कृपा होजाय तो इसी बहाने शिशु-राम के भी चरणों के दर्शन पा जाऊँ।

८ अगस्त ८७ चिन्तन — किसी के भी दिल को न दुखा - यही दिल का जो बैंड उसे बज देगा।

(२) हरण (सजन) देते समय ध्यान दे कि तेरी सजा का विधान भी साथ ही साथ हो रहा है।

(३) किसी का अनिष्ट-चिन्तन एवं अशुभ-चिन्तन मत कर। शुभ-चिन्तन से शत्रु भी मित्र बन जाता है अतः आवश्यकता है सिर्फ शुभ-चिन्तन की प्रगाढ़ता की

भावना — मेरे पास शिशु-रूप का चित्र पर जो है उसे जिधर वे भी देखता हूँ मुस्कुराता ही दीखता है उधर उसकी आँखें मेरी ओर ही निहारती दीखती हैं — यह भावना जागृत हुई। —

① सर्वत्र रामकी ही माया नजर आती है वह सर्वत्र

देखता है उससे छिपकर प्रणव रोज़ वहाँ
(2) माया में उपादग्रस्त को मुझे देखकर वह
मुस्कुराता है और हर हालत में मेरी ओर
देखता है यानि लहरा रहा है।

23 अक्टूबर 96 घटना - गत रात कुछ ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हुईं जिससे नौकरी में मुझे ऐसे कार्य करने पड़ते जिन्हें नौकरी में लगातार हेय समझता रहा हूँ। अतः

से 7 नवम्बर 96 तक स्वयं के लिये मुझे अब ही मन निश्चित कर रहा था कि इससे मेरी रक्षा कौन — अचानक प्रतीत हुई कि उपरी आर्थिक आवश्यकता को सीमित करें - मोजन में रुखा-सूखा, दुध और एक साग रखा। जबतक गृहस्थ में हूँ तब तक त्यौहार के दिन यह नियम न टूटे ताकि परिवार वालों को मानसिक कष्ट न होने पावे। नौकरी में उस कार्य को करने का प्रस्ताव गया ही गया। यद्यपि रुपये की आवश्यकता थी। मैं उपरति को इसके लिये तैयार नहीं कर पा रहा था। अन्तर्द्वन्द

हनुमान जी का चला हो चला। सायंकाल प्रारंभ
सुन्दरकांड का यह ऐसा अद्भुत प्रसंग है
है "प्राप्त कर्म को शुभाशुभ और फलाफल से
निर्लिप्त रहते हुए करते रहो और इसके बचे
हुए समय में नामजप कीर्तन करो इसके सिवाय
तुम्हें कुछ नहीं सोचने और करने का है।
तुम्हें क्या पता कि यह काम तुम्हें कैसे करना
है कर्तृत्वाभिमान मत रखो।" निश्चय किया
एवं इस विषय में किसी से कुछ नहीं कहूँगा। जीवन
में प्रत्येक बात को निर्लेप रहते हुए प्रभु के हाथ
जीवन समर्पण - व्यक्तिगत जीवन अति सरल
एवं अत्यन्त साधारण। किसी की आवश्यकता
न रहने से सेवानिवृत्ति के लिए भी
परिस्थिति का बेला किन्तु नीरव जीवन अति
साधारण एवं आवश्यकताएँ
कुछ नहीं।

१६-अप्रैल ८८ स्वप्न – कहीं गंगा किनारे गया हूँ बहुत तीव्र इच्छा होते हुए भी स्नान नहीं कर सका इतने में संजीव की नाव दिखी उसमें गंगा में जल भरने लगा। किनारे पर एक व्यक्ति बच्चे को गोद में लिये खड़ा था हमारे पहुँचते ही उसने बच्चे को हमें दे दिया। बच्चे को सुरक्षित रखने की इनाम स्वरूप मैंने दस पैसे उसे दे दिये। इसके बाद राहुल अभी दौड़ा हुआ हमारे पास आ गया।

२०-४-८८ ख्याल – इधर कई दिनों से सारल्य-भाव की कुछ कमी रही थी किन्तु अंतर दुर्बल हुँ साथ ही मन सदैव उसी के बहुत निकट है। प्रातः प्रातः स्नान के पश्चात भक्तचरितावली में दाई ओर कर प्रभु के लेख मिलिस करा कर स्वच्छ कराकर अगुली पहरा रही हूँ। इतने में बाहर से नाग की आवाज आई – आवाज सत्यमुक्त की यद्यपि रात्रि बहुत थी

यह पर हमारे बोलने का तात्पर्य नहीं था उसे
कैसे बन्द करने के लिए कीर्तन कर रहा था-
फिर दृश्य उसे भाव गया प्रभु आनन्द
छुनते ही लड्डू खाते खाते गहर विकलांग
१-२ मिनट बाद दाई का सेवा - क्रम फिर
से चालू होगया।

30 सेकेंड
१२६८ | निष्कर्ष - नाटक का निर्देशक जिस पात्र को
जो भी शब्द उचित समझता है पहरा कर भेज
देता है उसे मुलवा लेता कि हर मंच पर दूसरी
प्रस्तुतियों में पात्र पहरा कर भेज
देता है। नीरा होना या न होना कुछ
मतलब नहीं रखता - आवश्यकता ही
प्रधानता रखती है। अतः इस पोशाक
को बदलने की आवश्यकता मुझे प्रतीत
हुई उसने पास बुलाकर एक झांकी
प्रस्तुत होना है।

३१ जनवरी ६८ स्वप्न - मध्याह्न में जगन्नाथ जी जगन्नाथ प्रभु मान न जाने दीनबंधु जगत्पति पुरुषोत्तम पहले पहले मान विह्वल हो उठा। सायंकाल किसी कन्याओं का परामर्श मल्ल हो का अचानक झपकी आ गयी मात्र दृश्य दो बच्चे सन्मुख आये वे जैसे कोई उनके बीच में से कुछ हटा दे वह दीवाल गई १ सेकन्ड में फिलास पता हो गया। गाँव खुली और कहीं कुछ भी नहीं हृदय से उठा - छलिया छल गया -

४ अगस्त ६८ शवयात्रा - एक बच्चा की शव के साथ लगता जा रहा था परिवार वाले सारे रास्ते ढोल झांझ के साथ कीर्तन करते जा रहे थे - वही लीला हुई कि हे प्रभो जब तेरी विदाई का समय आया उस समय क्या आयोजन करा दोगे कि इसी प्रकार तेरा कीर्तन होता रहे।

२७ अप्रैल १९६९

विचार — अहल्या प्रकरण से शिक्षा देता है कि पत्थर समान कठोर बन कर हिम आतप वर्षा अर्थात दुख सुख के झंझावातों को सहते हुए धैर्य पूर्वक तेरे चरणों की रज की चाह करता है, तब स्वयं ही तू अपने चरणारविंदों को उस के मस्तक पर धर कर उसे पावन बना देता है। आत्मसमर्पण करता है अचल अविरल अप्रमाद गति से प्राप्त होने तक तेरी अपेक्षा करने की। सबरी ने भी सहस्रों वर्ष अपेक्षा की प्रेम पूर्वक तन तुझे जूठे बेर लाये और हनुमान ने सारे जीवन प्रतीक्षा करता रहा — किन्तु यह अहल्या की भांति पत्थर बन निर्जन वन में हिम आतप वर्षा नहीं सही कुटिया के अंदर आश्रय लेती है अतः तुझ जब की कुटिया में पधारे तो जूठे बेर तो साथ अपने आप उस के सिर पर चले गये और जहां ही तेरे चरणों पर सीस धरना पड़ा।

3-6-64 मादा भंग — श्री हनुमानजी के मन्दिर में पंगत के रूप में आज उत्सव कीर्तन हो रहा था। मैं भी पहुँचा — आज से पहले मैं कीर्तन में मंडली के साथ शामिल होने लगा था किन्तु फिर भी उसका स्थान आगे की ओर था। आज दस साल के बाद जगद्गुरु की कृपा भगवान के होने आज के उत्सव में श्री हनुमान जी की कृपा से मैं मंडली के साथ शामिल हुआ और इस प्रकार उक्त कीर्तन मंडली के अन्य अन्य जनों के साथ सहज तरीके भाव से दुःख का संकीर्तन करने लगा —

वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकर रूपिणम्
यमाश्रितोऽहि वक्रोपि चन्द्र सर्वत्र वंद्यते।

२५ जून
१९८९

प्रभु कृपा — गर्मी की दो महीनों की छुट्टियों में बच्चों को साथ लेकर मद्रास के पास आई थी कुछ दिनों पूर्व ~~मद्रास~~ गुरुरूप पति से एक दिन फोन पर बात कि दीर्घ कालीन आर्थिक वियोग होते हुए भी कुशाग्र आत्मीयता स्मृति पटल के सम्मुख मन को झंझोड़ डाल रही थी। बहुत दिनों के बाद उन्होंने मेरे से प्रार्थना की कि मैं उनके द्वारा इधर आये पत्रों को लिपि बद्ध कर दूं — एक दृष्टि डाली तो उनके पत्र सुस्पष्ट लिखावट में। सन् १३-६-९९ का पत्र लिखने के समय में प्रार्थना कि वह श्री राम के सरलता सौम्य रूप की कान्त भाव की अभिलाषा है। प्रभु के प्रेमी की इच्छा को ठुकराना सोचा ही नहीं अतः आज तो वह अवश्य ही उनकी इच्छा की पूर्ति करेंगी ही। अपनी कान्त भाव दो है नहीं हो सकता अतः इसे उनकी अपनी कृपा का प्रसाद मानकर उत्साह से शान्ति पाठ का ज्यादा मनोयोग। हे कीर्तन का सदुपयोग। अपने जन के योग क्षेम के लिये सब क्या नहीं करता है। धन्य हो प्रभो।

१२ जुलाई १९६८ — मेरे दोनों छोटे लड़कों के जन्म की पूर्णिमा १७ की रात को और अठारवीं १८ की रात को मुझे ग्रास्ट्रोसेल में ही एक जोरदार दर्द उठा। पड़ोस होने के कारण तुरन्त उठने का एलार्म न देना पड़ा किन्तु ठीक समय पर किसी ने मुझे गुलजार जगा दिया ऐसा मालूम पड़ा। पर मैं तब तो उठ बैठी। फिर जब प्रातः कीर्तन कर कृष्ण का गुणगान प्रभुजी गा रहे थे — कानों में सुनाई पड़ा "तोता है" सुनकर तत्परता पूर्वक कीर्तन करता रहा — धन्य हो प्रभो! — सोचा ऐसी ही कृपा रखना इस जीवन में कीर्तन न छूटने पावे — इतना आरोग्य तो करते रहना क्योंकि मैं अपना यह जीवन तेरे चरणों में समर्पित कर चुकी हूँ — ध्यान पकड़े रहना।

६ फ़रवरी १९६९ अनुष्ठान कक्षा — जप — मानस साधना में यह कि जप तीन प्रकार के — (१) वाचिक (बोलकर)।
(२) उपांशु — बिना बोले होंठ हिलाकर (३) मानसिक।
नाम जप के समय अर्थ या रूप का ध्यान नहीं करना चाहिये केवल स्वयं सुनते हुए नाम का जप करना चाहिये। एक ही नाम को जप करना चाहिये बदलना नहीं चाहिये।
भगवन्नाम मुख में अर्थ भगवत्सम्बन्धि प्राप्त कराते हैं। नाम साक्षात विधि भगवान हैं। भगवद्दर्शन तथा भगवद्धाम प्राप्ति में कोई अन्तर नहीं।
मैं अपने बारे में सोचता हूँ या श्री कृपालु जी की सत्ता का समय हो चला या कोटर में मैं अकेला नहीं था — अतः विचार आया कि उपांशु जप का आश्रय लिया जाय — अब तक यही माने बैठा था कि यह मेरे लिये सम्भव नहीं — किन्तु उसकी अनुकम्पा हुई जैसे

है। उसी से जब चाहे किसी मुख्य तत्व में लौ लग गयी उसी से रहते थे स्वस्थ। धन्य हो प्रभो एक यह भी सहना सुमने दिया। कारण मानसिक जब मैं ले कमी हो ही नहीं पाया।

१२ अगस्त १९८८ सत्संग - तीसरा नयन - श्री कृपाशंकर जी रामायणी ने बताया कि छिवनी की तीसरी गांठ 'विक्षेप' है जो सत्त को गुणवती एवं गुणत्त का नाश करती यथा - कामदेव को भस्म किया एवं श्री राम विवाह में पाँचों तीसरी गांठ को लोलकर गुणातीत ले ले हैं वहाँ कोई उपयुक्त घटना नहीं घटी।

उत्थान एवं पतनकर्ता - गीता श्लोक - "ध्यायते विषयान् पुंसः ..... विनश्यति" स्पष्ट पतन का क्रम बताया है। मानस का नारद का विमोह प्रसंग बताता है कि तत्व पतन का प्रयत्न होता गया किन्तु यापन के लक्ष्य भी उसने अपने हित का निर्णय प्रभु के हाथ छोड़ा था। उसे प्रभु ने बचा लिया यहाँ तक कि शरीर ग्रहण करना

पति के वियोग को सहन न कर सकते हुए की बजाय
मे सती के पंगुल में पैंस का पतंग न होते दिया।
ठीक इसके विपरीत पुलाद भगु इतनी उच्चकोटि का
धर्मात्मा होते हुए भी कभी मुनि के हाथ पतंग
देने के कारण सब प्रकार नाश हुआ। पतंग
आनिस्थिरता को उड़ाने के लिये बुद्धि की
बहुत आवश्यकता है किन्तु एक स्थिति नहीं
है जब उसके साध्य की प्राप्ति हो तब तुरंत बुद्धि को
आगे को छोड़ देना चाहिये अर्थात् अग्रगामक पतंग का
कारण एवं समर्पित उत्थान का हेतु होता है लेकिन
समर्पण के प्रभु मिलाने - ऊँची उड़ती पतंग डोर टूटी
पड़ने पर भूमि पर आ गिरती एवं मुनि के पतित पतंग
को ऊँचाई पर आकाश में उड़ाती। जगद्गुरु
पार्वती तपस्विनी संवाद बताता है हिमालय को
तप करते हुए पार्वती के तप में श्रद्धा से उत्पत्ति
होती है - (1) अटल निश्चय (2) गुरु पर विश्वास (3) श्रद्धा
(4) ईश्वर को न भूलना चाहे कितना भी कष्ट आ जाये
हो।

१८
१अगस्त
८९

स्वप्न - दर्शन कल रात्रि में मैंने स्वप्न में क्या
पूर्व की कापी पर लिखने का विचार था पर मन
में पुरी उत्तर के अंदर लाख्खन्नी तक्याच पढ़ता ही
रहा पर लिखने का समय न मिला। रात सोने के
प्रयोग करता भूल गया। अचानक चिल्ला कर
सोचा कि कहीं इस बात को भी भूल जाऊँ।
रात में स्वप्न देखा - सेतुबंध के पुल को
भूलने के कारण संताप वश उल्टे मुंह पड़ा
रहा हूं। श्री हनुमानजी ने कंधे पर रख कर
पुल का आगा (सिरा) के पास छोड़ दिया
है "जहां राम का जाप है वहां हूं उड़ जा"
लिख ले लेखनी राम रसायन हरि के चरणों में
रख बजरंगली की।

१८
जून
१९७०

घटना — आज प्रातः कीर्तन के समय "देवादिदेव सौ रूप मनिलोचन कृपा करहु प्रनतारति मोचन" प्रार्थना पुष्प संख्या २६ के भाव अचानक याद हो गये। दोपहर के बाद ध्यान से उपराम मिलने पर उक्त पद को माता में बांधा हुआ मन में उच्चारण के शब्द माला चलती थी अचानक मैं रोता हुआ पुत्र उदय उधर सामने की कुर्सी पर बैठा कुछ बातें करने लगा में माता बांधकर पट को सजाने लगा। इतने में अचानक मेरी बाईं ओर बाहर तरफ खिड़की के पास एक बच्चा बड़ा दिखा। उसने शीघ्र ही आवाज में बोला "कौन है" — उसका सांवला गोल चेहरा मुस्करा रहा था - सिर्फ इतना ही बोल वह बच्चा "परजाप जाबूजी" और मुस्कराता रहा "परजाप" कहकर उत्तर मैंने दिया फिर

उसकी ओर देखता रहा वह मुस्करा रहा था - देख देख कर मुझे आनन्द आ रहा था - जरासी नजर हटी फिर वह न दीखा — वह नहीं जानता वह कौन था पर अवश्य है मैंने उसी पर से अपनी दीक्षा ली थी — इस घटना का प्रभाव मेरे मन पर बहुत पड़ा अतः तीन दिन के बाद लिख रहा हूं।

सत्संग — ~~सत्संग~~ श्री ब्रह्मानन्द यज्ञ में आये हुए श्री आत्मानन्द जी परमहंस से प्राप्त — जीवन में साक्षात करने का प्रयत्न करना है अब अभ्यास —

3-6-64 आसक्ति — वांछित वस्तु मिलने पर और अवांछित वस्तु के न मिलने पर होने वाला आनन्द और इसकी अवगीत स्मृति में कष्ट का अनुभव आसक्ति है

उपलब्धि एवं उपलब्धि मानसिक प्रवृत्तियां
है। उपलब्धि बना रहे कर संसार में रहते
हुए भी मोक्षप्राप्ति का सकता है। हर पूर्व
उपलब्धि नहीं छोड़ी जाती। हर घटना में
ईश्वर का हाथ देखते हुए सतोगुण प्रधान
विधान जानना।

८-४-८१ मंत्री - राजा मंत्री भिक्षा मांगने जाते हैं
रानी महल में रहने का आग्रह करती है।
राजा नहीं मानता। सोच - फेरीवाले
अपनी दैहिक सुलेच्छा को मार कर मुझे
राज मार्ग तक पहुंचा दी इसलिए ज्यादा
उपलब्धि प्रधान मनुष्य नहीं का सकता
है उससे उन्नति नहीं हो सकती। मुझे
अपनी शक्ति और गुण कर्म का
ध्यान रखना चाहिये।

अवलोकन - प्रत्येक कार्य को सकारात्मक
करने से फिर उससे मन हट जाता है पता

मरने को वश में करने का यह सुगम उपाय है कि सभी कार्य यथोचित किया जाय फिर उसका फल भव पर छोड़ दिया।

क्षीरसागर - क्षीरसागर का मतलब दूध का सागर नहीं है इसका मतलब "ज्ञानरूप सागर" है।

हितेच्छा - हित करने वाले मित्र की भी उसकी इच्छा मालूम हो जिससे मार्गदर्शन सहायक बनता।

सत्यसंकल्प - इच्छे कर्म के भय या लोभ वश न छोड़ो।

१९ भगवत कृपा से ही भगवत-संतो का सत्संग
अप्रैल मिलता है और संत मुख से भगवान ही बोला
१९८१ करते हैं श्री आत्मानन्द जी परमहंस के
सन्मुख मन को वश करने की औषधि
पाने के लिये ता: ११ अप्रैल १९८१ को प्रात:
८½ बजे परासिया बंगले में गया उस वक्त
भजन चल रहे थे भजन के बाद परमहंसजी
ने मेरा विषय उठाया एवं Guest house में
सामूहिक रुप से योग क्रियाओं की दीक्षा देते
समय एवं वहाँ से वापिस आने के बाद
भी प्रकाश डाला।

उन्होने तीन तरीके बतलाये जो कि
तीनों ही एक दूसरे से स्वतंत्र होते
हुये भी सहायक हैं और ये तीनों ही क्रियायें
ध्यान की योग क्रियायें है और तीनो ही
क्रियाओं में श्वाँस की गति साक्षी रहना
एवं स्वाभाविक रखी जानी चाहिये। सहज

सरल आसन पर बैठ कर पीठ को सीधी रखते हुये शरीर को एकदम ढीला यानि तनाव रहित रखना।

I

a) नाद :- दोनों कानों के छेद को दोनों हाथों के अँगूठों से यानि दायें अँगूठे से दाँया कान बायें अँगूठे से बाँया कान बन्द करना।

b) दोनों आँखों को बन्द करके अँगुलियों से दो बार पलकों को मसलना फिर बीच की अँगुली से (Eye Ball) को अन्दर की तरफ हलका सा दबाना, ऊपर की एक एक अँगुली ललाट पर एवं नीचे की दो दो अँगुलियां गालो पर, इस मुद्रा में बैठना ध्यान यानि मन दोनों भौंहों के बीच (भ्रूमध्य) में स्थित करना इस मुद्रा में कम से कम 4 मिनट रहना। इस समय जो भी शब्द दाहिने कान की

तरफ से आवे उसे ध्यान पूर्वक सुनना
भ्रूमध्य में जो भी प्रकाश या शक्ल दीखे
उसका ध्यान रखना लेकिन न तो किसी
शब्द से चकराना और न किसी रंग या
शक्ल से भयभीत होना। इन दोनों
में से कोई एक अथवा दोनों क्रियायें साथ
साथ की जा सकती हैं। इसके बाद उसी तरह
बैठे बैठे नेत्र बन्द रखते हुये हाथों को
जंघा पर पटक देना और जो कुछ भी
ध्वनि या प्रकाश आ रहा हो उसे आने
देना। आना बन्द होने के बाद या कम
से कम दो मिनट के बाद नेत्र खोलकर
भगवत स्मरण करना। इस क्रिया से शरीर
के बहुत से रोग भी नष्ट हो जाते हैं।

II अजपा जाप :— स्वस्थ मनुष्य का २४
घंटे में करीब २१,६०० स्वांस चलता है।
जिस की जिस किसी भी नाम में प्रीति

उसके दो भाग करना। स्वाँस अन्दर
जाने के समय पहिला भाग और
स्वाँस बाहर निकलने के समय दूसरा
भाग यानी रा..... म..... जप करना
इस क्रिया में हमेशा मन और ध्यान स्वाँस
के आने और जाने पर रखना पड़ता
है २४ घंटा खाते पीते उठते बैठते
चलते फिरते सांसारिक हर कार्यों को
करते हुये भी मन से स्वाँस का
आना जाना देखते हुये रहना होता
है। जिसकी विशेषता (Priority)
मन में होती है उसी की तरफ मन
जाता है अतः अभ्यास हो जाने के
बाद जब जप ही जीवन में विशेष
स्थान प्राप्त कर लेगा यानी इसकी
(Priority) मन में हो जायेगी तब सारे
सांसारिक कार्यों को करते हुये भी

मन हर वक्त उसी में स्थित रहेगा। मन एकाग्र करने की एवं भगवत प्राप्ति की ओर निश्चयकर मृत्युकाल में उसकी तरफ अपनी मन की स्थिति को कायम रखने की यह एक मात्र रीति है क्योंकि मृत्युकाल में जब शरीर त्रिदोष ग्रस्त हो जाता है उस समय और कोई क्रिया कायम नहीं होती किन्तु श्वास चलता रहता है और मन को उस श्वास की गति की पहचान रखने का अभ्यास और आदत पड़ी रहती है। इसलिये स्वभाववश मन उस काम को करता रहता है एवं नाम के अधीन होने के कारण स्वरूप को आना ही होता है। प्रारम्भ में यह क्रिया बहुत दुष्कर है पर अभ्यास सुलभ भी उतनी ही है। सिर को वक्षस्थल की तरफ झुका कर ठोढ़ी को सीने से सटा कर भी यह अजपा जाप

किया जाता है इस मुद्रा में श्वाँस की संख्या प्रति मिनट कम हो जाती है।

III दिशा :- पूर्वाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख होकर उपासना का विधान है लेकिन उत्तराभिमुख ज्यादा फल प्रद है, क्योंकि उत्तर दिशा में (magnetic field) है जो कि मनुष्य के रक्त को जो लोहे की धातु से बना हुआ है अपनी ओर कम्पास के magnetic needle की तरह खींचता है।

IV गंगा तट :- गंगा की लहरें सतत प्रवाह से सागर की ओर जाती है और एक के बाद दूसरी अनन्तकाल से इसी प्रकार समुद्र की ओर चली जा रही है। यह अंतर्लक्ष्य जगाता है कि प्रत्येक जीव एक न एक दिन उस परमात्मा में मिल जाना है इसीलिये गंगा तट पर शांति प्राप्त करने का उल्लेख शास्त्रों में है

V

आनन्द :- मिलन सुख, विछुड़न दुःख देता है। दुःख का न होना ही तो सुख है और सुख ही आनन्द है। वांछित वस्तु की प्राप्ति में सुख एवं वांछित के वियोग तथा अवांछित की प्राप्ति में दुःख होता है। क्षीर सागर यानि आनन्द सागर में ब्रह्म शयन करता है यह शास्त्र बतलाता है और उस पथ के पथिक को भी आनन्द सागर में डूबे रहना आवश्यक है। उपरोक्त दुःख की स्थिति में दुःख का अनुभव न करना ही आनन्द सिन्धु में गोता लगाना है। अर्थात कितना भी हृदय पीड़क दुःख की परिस्थिति आवे उसमें आंतरिक मानसिक पटल का स्पर्श दुःख को न करने देना ही आनन्दमय जीवन है किन्तु समाज का अंग होने के नाते यह आवश्यक है कि उस दुःख से सम्बन्धित सारे व्यक्तियों के साथ एवं उनके सामने दुःख प्रदर्शन

को नाटक अवश्य किया जाय ताकि उनकी आत्मा में ठेस न पहुँचे एवं किंजल्क की ~~स्थिति~~ टीका टिप्पणी न हो। उपरोक्त आनन्द की स्थिति ही के हमारी आंतरिक मानसिक स्थिति होनी चाहिये। बाल्मीकी नाटकी लीला तो दुःख प्रदर्शन की ही है जिस तरह श्री राम-चन्द्र जी ने सीता विरह में की थी।

VI

त्याग :- सांसारिक्तः घर से निकल जाना, कुटुम्बियों के प्रति उदासीनता दिखाना कपड़े के वेष भूषा एवं जीवन की अन्य क्रियाओं में रुक्षता का प्रदर्शन ही आज की दुनियां में त्याग समझा जाता है किन्तु त्याग शब्द का असली अर्थ यह नहीं है बल्कि अनासक्त जीवन है यानी सुख और दुःख की स्थितियों में मानसिक सम भाव रखना एवं प्रत्येक घटना में

उस विश्व संचालक एवं विश्व प्रेरक का ही हाथ देखना एवं उनके प्रत्येक विधान को मंगलमय तथा और मान कर जीवन करना ही वास्तविक अर्थों में त्यागी जीवन है। यह मानसिक स्थिति है दिखावे की बाहरी शारीरिक स्थिति नहीं है। बल्कि होना यह चाहिये कि आपका इस मानसिक स्थिति की हवा तक किसी को कानो कान भी बाहर प्रगट न हो। सांसारिक जीवन में जो कुछ भी चर्चा करना पड़ता है अथवा किया जाता है उसमें यही भावना हो कि प्रभु मेरे से यही सेवा लेना चाहते हैं एवं उस कार्य की सफलता, असफलता हानि लाभ का अच्छा या बुरा असर दिमाग पर न आवे एवं अपने परिवार के लोगों की भी सेवा भगवान के स्वरूप की सेवा समझ कर की जाय

न कि अपने परिवार की। अगर यह दृष्टिकोण हो जाता है तो अनासक्ति स्वतः हो जाती है और उसका जीवन सच्चा त्यागी जीवन हो जाता है।

१३ अप्रैल १९७१

**अनुभूति** – आज प्रातः 'अपंपु' शिल्पिक भवन लिखते लिखते जो मानसिक एवं शारिरिक स्थितियां तुरंत प्रपंचात्मक उत्पन्न की उसके लिये प्रश्नों बड़ा प्रभावी हुं। यानना यही है अब इस बन्धे को कि जब तक तु छिपा छिपा डोलता है तब तक यही ऐसी ही इससे अधिक उन्नत स्थिति हैं स्थित रखना साथि हर क्षण सिर्फ तेरे में ही रह सकुं।

१३ जून १९७१

**श्री सुरत का वर्णन** –

कभी सुनहरी झांकी अंधेर रंग रंग में बड़ी तेज चमचमाहट। कभी धूम्र नील वर्ण। कभी श्वेत नील मिला हुआ। कभी गाढ़ा श्याम वर्ण हो जैसे कि परदे की तरह बदलते रहता। कभी लघुवाकु वर्ण। अद्भुत नाटक सरजन का।

१७-७-७१ स्वप्न रात एक व्यक्ति देवता कोई कह रहा है परसों तुम्हें मरना है मैंने कहा अच्छा उसके उपाय बहुत कम हैं अतः कीर्तन करो मैंने कुलजाता का दो लाकि हरिनाम कीर्तन हेतु दे उधर जब विदा हुई कीर्तन चल रहा था मैं खड़ी रही उधर उन सभी को कीर्तन करते मैंने उधर उनके कीर्तन की करतल ध्वनि सुनी। दो घंटे के उपरान्त तो जाना पहचाना घर उधर कुलेश्वर स्मृति नहीं कौन थे शब्द दो। गाते थे। उधर घुली रात रात के २ बजे थे।

७-६-७१ घटना - ता. २८-८-७१ को ट्रेन ११ रिवड़की को उधर मुख किये जलपान कर रहा था। बाहें उधर दीर्घ लड़ किसी ने हाथ फैलाया - भिक्षुक जाने लगा वाह ये हैं जाते रहा - कुछ क्षण बाद उत्सुकतावश मुंह घुमा कर उसको उधर देखा - नील वर्ण का गोलमुख वाला - एक हाथ पसारे मौन खड़ा है - अरूप

बिना माँगे ही
उसके जुर्म पर पर जो ला रहा था उसमें कुछ
निकाल कर धरदिया – वह दौड़ ही चला गया –
गाँव में ये खबर फैलते देर लगी ऐसे नरी का
मनुष्य गुण तक जीवन में मैंने कभी नहीं देखा
कैसा लुभावना था वह चेहरा – फिर कोई महत्व
न दे बड़ा बड़ा साँप निकल (ह) – गुरु संध्या
को तबस्सुम प्रचाहाक उस घटना की स्मृति
में लड़ाकर दिया – कैसा गुणागार हुं आपका
प्रभु कृपा करने गजारे हो हमने सत्कार नहीं किया
जी भर गुरु वेचैन हो उठा कारण ऐसे नरी
का मनुष्य मैंने गुरुजी तक नहीं देखा गुरु
मुख पर उसके गुणगान हो रहा था – मौका युक्तगम

२८ मार्च ७२ **घटना (गुंत सुधार)** – गत २७ फरवरी ७२ की शाम को प्रचाहाक पति को तेज ज्वर चढ़ गया गुरु तकलीफ बढ़ती ही चली गयी। ४-३ को रानीगंज के डॉक्टरों से होमियोपैथ डाक्टर को बुलवा दिया

ग्रहण काल के संकेत हृदय में उतर गया। रात निकालनी मुश्किल है।
हाथों की अँगुलियाँ पर गिनता बेचैनी बढ़ रहा था - पत्नि वियोग की कल्पना से हृदय रो रहा था। पत्नि ने कहा - "चाय मँगवा दो प्रभु को उपस्थित कर ग्रहण प्रसंग पर कुछ चाय पिलाई - मेरा लगाव प्रसंग करवा - फिर कहा मैं ले कर ही रुकती हमें साथ सुनाते रहो।
इसी बीच विजय ग्रहण गुरुदेव का चित्रपट लाकर उस कमरे में टाँग दिया - चित्रपट के लटकते ही उस संत पुरुष के प्रभाव से दस मिनट में ग्रहण सिरहाने से डा. परिमल बाबू ग्रस गया उनकी दवा चालू हुई बदन का कंपकंपाहट होने का बटाव रुक गया, रात व्यतीत हुई सुबह से

लाभ उठाना शुरू हुआ — डाक्टरों का दल निकल होने बाद 4-3 की सख्त में मैंने 'एम' विटामिन उपलब्ध किया - स्वरूप ऐसी लय-चाचू हुई जो मैं जानता भी नहीं था - उसके फलस्वरूप पुनी - पति मृत्यु मुख से वापस आ गया।

इस 3-4 सप्ताहों की अवधि में परिवार परिवार का संरक्षणहीन संरक्षणहीन अवस्था में ही पड़ी रही एक प्रमाद यह है कि उनका नियम रहा है कि प्रातःकाल कुछ भी मुख में लेने से पहले ॐ नमो भगवते वासुदेवाय इस दिव्यमंत्र मन्त्र किसी से कहला कर कुछ मुंह में डालती - कोई कहने वाला न होने मुंह खाली रह जाती — उपवास इस नियम का भी होकर उनका इस अवधि में बिल्कुल नहीं हो गया। यद्यपि इस लेखा मंत्र

उन्हें हरा दिया करते थे।

उनकी स्थिति सुधारने के बारे विचार
प्रकाश - प्रकाश किसी का प्रयोजन
हुआ। - किंतु समय के प्रभाव कि
प्रौढ़ काल में मनुष्य कुछ भी
अभ्यास या शिक्षण काम नहीं आता
उसकी बुद्धि ही ले उसके स्मरण एवं
ज्ञान नष्ट कर देती है। जब वह वृद्ध
हो गया तब एक दिन उसे मुझे
निकाल कर दिखाया कि किस तरह
पक्षी ने उसका गला पकड़ के
छोड़ दिया और जकड़ कर बन्द किया था।
प्रकाश काल की इसी स्थिति से जो मानव
उठी उसे प्रभु की शरण में रह सके
१२ में प्रकाश सुधार शिक्षक में प्रभु से
प्रार्थना की है। प्रकाश काल में लम्बे प्रेम
रसीले भजन या प्रार्थना मनुष्य नहीं गा सकता
केवल 'राम' नाम ही रट सकता है।

२६ जून ॐ जय गुरु!
१९७२
गुरुवार ता. २६ जून १९७२ को निजय के साथ मैं ग्रासनसोल जा रहा था रास्ते में निजय ने कहा "मामुजी यदि ग्राप ग्रापत्ति न समझें तो एक बार मेरे साथ चलें चलिए ग्रौर महाराज को दया की सारी बात बता दीजिए मैं तो सारी बात जानता हूँ।" मैंने कहा ठीक है २९ ता. को चलेंगे। कार्या मैंने विचार महाराज के दर्शन का मौका क्यों छोड़ें। फिर मन में विचार उठा कि ग्रपना दुखड़ा भी सुना दूँ।
ग्रज प्रातः कीर्तन में लेट कर उठते उठते भाव ग्राया "कब लगन लगेगा राम हृदय में"। निर्णय समय पर हम दोनों चल पड़े - रास्ते में दो ग्रौर

सज्जनों की विजय ने गाड़ी में साथ दिया - ८ सीमों जाके महाराज के बारे में उनकी सिद्धियों के बारे बातें करते जा रहे थे - मेरे चुप्पी साध रखी थी - सोचता जा रहा था - किन्तु हरि कृपा मिलती है वहीं संत - क्या मेरा ऐसा सौभाग्य होगा कि महाराज मुझे उपकार्य दें - क्या एकान्त में उपदेश बात कह पाऊँगा - गुरु गुरु के सहारे की बड़ी उपयोगिता है क्या मेरे पर प्रभु कृपा करेंगे - क्या प्रभु के दर्शन पा सकूँगा इत्यादि -

महाराज के स्थान पर पहुँच रात्रि भोजन महाराज भोजन कर रहे थे। फिर महाराज से विजय के कुशलता और फिर विजय ने मंजु को मुझे बुलवाया - मैं पहुँचते ही उन्होंने

निर्णय को भी हरा दिया। फिर कहा
यहाँ कोई नहीं। प्रयाग में इससे
एकान्त में बात करेंगे। सीढ़ी का द्वार
बन्द कर दो। फिर नीचे लिखी बातें
हुईं —

प्र: तेरा नाम क्या है
उ. मेरा राज। - शेखर पुलट्ठे
प्र. कहाँ का रहने वाला है
उ. रानीगंज कैंटल का
प्र. यहाँ कैसे आया
उ. जंजलगढ़ का —
प्र. किस स्टेट में है
उ. जयपुर स्टेट में
फिर कहा कि राजा साहब तेरी के साथ
कुछ भेद कहा है जानता कहीं कभी
गया नहीं।
प्र. कहाँ ठहरा है - प्रतु, स्त्री, धन

सम्मति, शुभाशीर्वाद अच्छा चाहते
अ महाराज यह कुछ नहीं कर सकता।
प्र फिर कौन उपाय है
अ महाराज, विपरीत विद्या सीखने
का उपाय है -
प्र तो बहुत दुर्लभ दिखलाते हैं
अ इसीलिये उपाय है - मैंने भी तुमसे
सत्य नहीं है - इस से परीक्षा नहीं
हो सकती है।
प्र तो इस से शिव को होना चाहिये
अ नहीं महाराज किसी दिन कार्यवश
नहीं (हो) -
प्र इसी बात दादा पड़दादा से शिव
के उपासक थे मेरे कुल के शिव
ही है
अ महाराज कैसे नहीं
प्र से यह व्यभिचार है

हेरंब ब्रह्मा पर।

उ. महाराज, मेरे वक्ष के बालक हैं।

प्र. तो फिर कौन है

उ. ~~बालक~~ राम

प्र. ये राम तो मनुष्य जाति का एक भगवान नहीं - फिर तो ये तो लिंग भगवान है -

उ. नहीं लिंग तो राम ही भगवान है उनके लिंग के लिये हम कोई स्वामी नहीं।

प्र. फिर तो भगवान है - कि नहीं

उ. महाराज! मेरे पुत्र बालक उपास्य नहीं मेरे भगवान तो राम ही है, पुत्र तो मेरे बालक राम

प्र. राम के बहुत से नाम है कौनसे नाम

उ. महाराज! दाशरथि राम

प्र. बालक को साष्टांग नमस्कार करो

उ. नहीं - बालक को साष्टांग नमस्कार करना -

प्र: इस गुरु का क्या है
उ: जब तक बताते नहीं
प्र: क्या कमी देखना है
उ: [illegible] सिर्फ निगाह पर देखना है
प्र: सोचकर बताइये—
कुछ कारण समझ आया हो— मेरा हृदय कांप रहा था क्या तीसरी लेटना होगा— उसका महाराज का सिर झुकना और कपड़ा हिलना—
प्र: मरी उसांसें ले देख नहीं सकता
उ: महाराज— उसांसें ले देंगे नहीं जो उनसे हो सके तो दे दो—
मेरे सिर पर महाराज के कहने पर गुरु ने हाथ रखा मैं सिर रख दिया— महाराज ने कमंडल से गंगाजी उठाई सिर पर छिड़की और उठाया उसके दीक्षा दी

हुई मस्तक पर हाथ जड़ कमल एवं
को स्वीकारोक्ति विकल — सपने
शिलाक्षर पुलाकम गयी कह दुनिया
लिये रहे, बताना आत ले झूलती
विभारी बटेगी — पंच रोपे बाला
है पाँच होने लिये जैसे एक विजय
के लिये — झूलने एक शुभ चाक्ष
भी लिया (बाल का प्रताप कहाँ
जा चुके वो पल; वह गुड़ प्रसाद
मुझे दिल आयेगा) — [illegible]
के लिये ही एकाग्रता में बाल कवि का
विश्वास उन्होंने किया — एवं जो मेरा
सम्बन्धी सही नहीं प्रादेश शिष्यों
लिये — मेरा आपका मुझे पूछा
"अब तो शक्ति मिली" कुछ कहा
हो अहा ! —

मुनि ने शिष्यों से कहा यह
भोगवती आती है उसे
शापमुक्त दे - तीक्ष्णतप तेज
नदी तो के बाद इसके सभी
आश्रम -

शाक्य कहे इस विद्या हुई
धन्य मुनि - मैंने यहाँ आज
है शुभ में, प्रज्ञा अब -
अंगुली की ग्रन्थि में कुण्ड है यज्ञ
मुझे गुरु की प्राप्ति हुई।

महाराज ने कहा - तुने यज्ञ मेरे
से यह मन्त्र चोरी लिया और मैंने यज्ञ
तक तिर्यक्लोक में एक गाँव से घोड़
करिणी के नहीं दिया - यही मंत्र
वशिष्ठ मुनि ने भी राम और भी
लक्ष्मण को दिया था -

धन्य भाग्य मेरे जो विद्या को प्राप्त
हुआ मैं जाऊं जिसने मुझे की गुरु क्रिया।

दुर्घटना — कार द्वारा हैं विजय कुमार
1982 शर्मा एवं मेरा साला महाराज के दर्शन
हेतु रिंगुस जा रहे थे — अकस्मात
चन्दन नगर के पास गाड़ी उलट गई
गेंद की तरह गुड़क गयी। चालक तथा
कुछ पर सब से ज्यादा चोट शर्मा
के सर्द खोपड़ी में ऊपर का भाग
कुछ तरह कट गया — जख्मी कार
चन्दन नगर अस्पताल पहुँचे —
प्रातः 10-0 बजे शर्मा को अस्पताल
स्टाफ ने छुट्टी मिली — शर्मा
अस्वस्थ होता जा रहा है यद्यपि
डॉक्टरों का कहना है ऐसी दुर्घटना
हो कि किसी को ज्ञान बच नहीं
सकती।

१६ घटना - प्रातःकाल गुरु के देव के श्री चरणों
१६८२ का स्पर्श कर शरीर उन्हें वैकुण्ठ प्राप्त हो
निद्रा से उठ पड़ा। प्रातः
उठने में देर हो गयी ज्यों ही नींद खुली
बड़े मधुर ध्वनि में राम राम की
दिव्य ध्वनि सुनी, कुछ देर सुनता रहा
शायद बाहर कोई गा रहा है - पर नहीं।
शायद निद्रित अवस्था में स्वप्न के साथ
प्रातः ही वहाँ कान लगा कर सुना परन्तु
वह कर्णप्रिय मधुर ध्वनि तो सुनाई पड़
ही रही थी। पर इसका उद्गम स्थल कुछ
समझ में नहीं आया पर ध्वनि सुनता
हुआ स्नानन्द विभोर शौचादि
के लिये चला गया - प्रातः क्रियाओं
से निवृत्त होकर कुछ खाते खाते हटात्
भावना जागी कौन है यह अलौकिक शक्ति कुछ
गड़बड़ सा है ही है। प्रचालक डाकी पर

हाथ रख और उसी प्रकार शांति से उठ कर हाथ न उसी में रख रख लिखकर प्रकार का दिखावा किया कि यही प्रदेश है उस प्रकार शुक्ल किसी रख रख लिया का कलस्थल यह काम अपनी दिनचर्या में शामिल कर लिया — जय गुरु नम श्री राम

20 फरवरी 1963

लघु — प्रातः जब उठता हूँ तो सब ओर हरा ही हरा दिखाई देता है। कहीं पहाड़ी प्रदेश में चला जाऊँ। पर्वतों पर चढ़ना बड़ा ही सुहावना लगता है। ऊँचे पर्वतों की ओर जाता हूँ। कहीं बाँधी पहाड़ी व्यक्ति की छाया पड़ती है एवं एक विशेष नियमित दूरी पर मैं तक साथ साथ चलता ही है। पीछे मुड़कर

देवर पर कोई दिख नहीं पड़ा। पर छाया साफ
ही दिखाई दे। इतने में देवर
पर कोई नहीं दीवार में कैसे
"माई जिस की छाया है पुकार कहीं नहीं
होते प्रत्यक्ष कैसे है पुकार हवा में
उसी पर भावना। कोई "ती दीवे
प्रात्मा है - प्रात्मा परमात्मा
प्रकट है" किसी मंगा हुई उस
बड़ा हुआ - प्रातः किसी बेला हो
चुकी थी। उठते ही भावना जगी
कि सारे श्री गुरु महाराज या तो
इसके सिवाय किसी की नहीं
तो साक्षात्कार होगा। एक जगह
बहुत सुन्दर फाल भरे नेत्र दोनों
से प्रश्रु धारा - कई दिन प्रणाम
कर चुकाकर - वापस उस कुटिया
होकर होवे लगा - प्रातःकाल हो गया
गया - प्रश्रु धारा जारी।

प्रातः शायं नींद खुली -
"राम का सुमिरन सुबह शाम लिया।
मैं कुछ न किया, हो नाम तेरा लिया॥"

26-4-03 मेरठ - प्रातः ५ बजे वीर बच्चों का मोक्ष जाने के लिए हो

22-5-03 चमत्कार - पूजा घर में रखा सफेद लाई हुई है गत वर्ष एक साल से खराब नहीं हुई है अतः उसमें एक चमत्कार है। अतः अब लिखित रूप में - सोमवती अमावस्या के दिन बहुत ही अच्छा था और मेरे लिए बहुत ही लिखने जैसा रहा - पूर्वजों का पितृ अच्छा किये थे - अभी कार्य क्रम कुछ निश्चित न करने का है - एक आत्मिक विनती की अब देखने को अवश्य, जाने में Torchlight जल गयी - कुछ लोग आज देखने आने वाले थे - नहीं आये, फोन आ - आत्मिक गृह प्रवेश की खुशी - प्रकाश का होना अब अच्छा आदि अनेक उपलब्धि है।

ग्रहदेव मिलाप – प्रेम का संसार बसाने
ग्रहदेव करेंगे.

21 मार्च ग्रहदेव – दिल में वे शारीरिक परिवर्तन
बताने की कोशिश न करें – ग्रहदेव मिलन
हुआ अतः हैं ग्रहदेव इस से पूर्व मि-
लिन पर तुषारात्मक शब्दों की
वर्षा होती थी अतः उन्हें बाधा इसमें
कोई लाभ देना नहीं है जिस
से की जिस तरह सभी बाधा
पराजय देखकर वह दोनों सुख
बनें – जय श्री राम। २२४

10 जून 1986 प्रभु कृपा – ① ग्रहदेव मंदिर की घटना
है जिस में कोई दख नहीं – प्रीति सुन्दर
से युवा सरदार (इस वर्तमान की शक्ति के परे है
25 जून 1986 ग्रहलौकिक ग्रहदेव है) ग्रहदेव के सामने
पधारे। मैं दूर से देखकर ग्रहदेव
उनके पद चिन्हों को अपने हृदय पधारे

वह्वा (वह्वा) में जनक दृष्टि गई
की उनकी बाँसी सदृश जा मुकुट सिंधु
में सदृश खिलते लगा रही थी-
"कैलास से हट्टाकट्टा लाया है।
"क्या कहना नहीं चाहिए।
"पैगुली से मंत्री उतार चुके हैं तो लगे
"अब करने नहीं चाहिए।
दृश्य की मुक्त मानव की आलस्य
के सिवा एक कुछ नहीं चाहिए
मुख्य प्राण से नहीं निकला।
माया ने कहा- प्रणाम नहीं किया
चरणों का प्रणत नहीं हुआ तब
खड़ा रहा- "कुछ देर" प्रार्थना
मुहँ खिलखिलाया- "पैरों से अब
तक तक माया ने मुझे अ खिलखिला
दी है। फिर। स्वयं को दास-साधु
के याचक समझते लड़ाई नहीं की थी

सांत्वना न दो। हाथ उठाकर
चलते चलेगये। इस बीच
हाथ हटाकर तुने तिलका का
मुख नहीं देखा भी न था पर
पिता प्रभातस्मिति के समय उनकी
स्मृति पर ध्यान करती रही -
इसी घटना पर पद्यसंख्या
305 है। प्रति मृत्यु संस्कार
पत्नी की उनके लिये श्राद्ध तर्पण
कराया उक्त घटना के बाद बृहस्पति
वार को पुरोहित को पास खड़ा था
इसने कैसे अनोखे ढंग से कहा
याज्ञवल्क्य एक तरफ खड़ा है
पास ही तुलसी है जिसे
नमस्कार किया - पद्य में उसने
सो कुछ ही सामने कह गये -

शिष्टाचार के नाते वैसे "नागवा
सबों के लिए
सबों के लिए ठंडा प्रकार के हैं उनके
तरीकों के नहीं सावस्कर्ता
सरवत पीने के बाद उठे और बैठने की
प्रकार तुरंत हो गये "अरे चलेंगे
③ 23-24 के बीच की तब सबा बीच
दो नंबर तुली न-नहीं देखते हुए
कि कहीं कमी रह गई- तब तक
ने में बैठा कर पालकी द्वार
पहुंचाने की अंतरंग सभा में
खाने की इच्छा नहीं की
सामने प्याली चाली को हुकारा नहीं
चाहिए बैठा
उसके
उपर दहिना
पालकी सरके
हुए एक बालक प्रवर बांसी जांघ
पर बैठाया हुआ दहिनी
सुंदर मिसरा पहले के बांयी ओर

नेत्र गये - ऊँगे कहा ऐसी लिये चली
गई छोड़ी चाहिये। और प्रकाश
ग्रास प्रकाश बालक के झूले में
लिये बैठे हैं तुलसी चढ़ी में
सर्वालीन बजे थे - प्रभात फेरी
का समय जाने हेतु गया। इसी के
एक पर संख्या ३१० है
(जय जय जय जय जय जय हो)
जय यीशु - जय राम जय राम
उपरोक्त प्रकाश करने के बाद एक दूसरे
नन्द सर हाँ गया कहा आज कैसा लगा
बच्चे हो गया - तुलसी कटोरे के बाद
प्रकाश साधु की स्मृति गया विस्मृत हो
गयी - कभी कभी प्रकाश कहानियाँ
बच्चों को सुनाती है "अरे अरे
पुराने समय कैसा पाप घर गया था -
चरण को न पकड़ लिये" आज ऐसा
है राम लीला - सीता राम

1/5/79 गत कल की घटना ने सचमुच
मैं कितना गहरा हलचल मचा दिया
है। बड़ी कृपा
की प्रभु ने। फिर होता है स्वप्न - सुरक्षित
तीर्थ हो रहा हूं। सिरहाने गंगा बह रही
है, कोई गंगाजल लेकर आया है
और कहता है गंगाजल है पीलो
तब देवता हूं गंगा जल कैसे सिरहाने
बह रही है - प्रभु अनायास यह
स्वप्न सुनकर देता। कहा 3 रु - उठते
ही सोचा तब मैं किसी का हो गया
और उसके साथ कहां कहां गया हूं।
सचमुच हुआ कैसा क्या विपदा को
भगा दी है। इसी की कमी है। इसी
हो सकती है तभी उसके
लिए इतना कुछ। जैसे इन महाराजों
के पास हाथ हाथ लगाने वाले ही
पास हैं निरंतर काम वाले नहीं

25-3-80 श्रीरामचरितमानस का नवाह्न पाठ

रामनवमी इस साल चैत की नवरात्रि में नवाह्न पाठ का प्रायोजन था समय पर पैंडीत का उतप्रान्त भंग हो गया तब तीसरे लड़के प्रजय ने जो रिहर्सल में स्वयं करता था उस समय वक्त नहीं था प्रभु क्या चाहते हैं। 17-3-80 को प्रारम्भ हुआ- जब सुबह सोकर उठा का तब कानों में सदगुरु धुन से राम राम की ध्वनि स्पष्ट सुनते सुनते नींद खुली थी प्रावाज प्रजय की सी थी जाकर देखा वह गाढ़ी नींद में सो रहा है उठकर सुना तो वह सो ही रहा है और प्रावाज भी कुछ नहीं है। ठीक यही घटना 18/3/80 को भी सोकर उठा तब भी हुई- धन्य प्रभु हो जाते।

③ 17/3/80 को प्रात: स्नान के समय भावना उठी कि नवाह्न पाठ को सिर्फ पाठ ही न समझकर यह भावना रखो कि जिस नवाह्न के दिन जो प्रधान प्रसंग हो उसदिन उस प्रसंगानुसार ही प्रभु का भोग हो चाहिए इस भाव से

को ही लिये रहा कि सारे ही प्रभु के चरित मानस में यथादि की भाँति यहां घटित हो रहे हैं। अतः प्रभु का भोग भी तदनुसार ही रहे। अतः निम्नलिखित प्रकार भोग की योजना बनायी:—

१ला विभाग - प्रारम्भ एवं श्री राम उत्पत्ति
भोग - फल सेव

२रा विभाग - प्रभु का जन्म - आदि जन्मोत्सव
भोग - धनिये की पंजीरी + नारियल

३रा विभाग - विवाह - सुसराल में भोजन
भोग - खीर

४थे से छठे विभाग तक - वनवास एवं सीता हरण
भोग - प्रत्येक दिन भिन्न - क्रमशः ~~नारंगी~~ (मध्य प्रदेश)
खीरा एवं सफतालु नारियल

७वां विभाग - सुग्रीव को राज्य देना - सरयू तट का
प्रागट्य - सीता का पता चलना - लंका यात्रा
भोग - फल प्रकार (दक्षिण भारत में उपलब्ध)

८वां विभाग - प्रयोध्या फिर से पहुंचना - उत्सव
भोग - हलुवा + पेड़ा + केला (शुभ)

एवंविमुक्त - राज्यतिलक

भोग - चुरमेका लड्डु + चार तरह के फल

भोग के उपरांत-पुनः का आरंभ -

अजिनवसन फल, मृगचर्म शयन उसि कुस पात सुखद

③ प्रत्येक विमान प्रायः १२० दो होंके है

एवं, प्रलय के लय के साथ पाठ प्रारंभ हो

घंटे का समय लगा - नवाह की समाप्ति के

बाद मैं, प्रपना ~~विवाह~~ रामायणी का नियम

विवाह के लिये बालकांड का सम्पुर्ण

पाठ करने बैठा - हृदय रोग की बिमारी के

कारण उच्चारण न कर सका देर घंटे बहुत

हो गयी थी, प्रातः बिना सम्पुट का पाठ बिना

प्रयास के करने लगा, और प्राश्चर्य हुआ

जब प्रत्येक नवाह पुरे साठ साठ मिनटों

में होता चला गया - विवाह, प्रथा अनिष्ट

में मानसपाठ का जगह इसी भाँति

बिना सद्गुरु के और बिना भगवान कृपा नवाह्न पारायण ही असम्भव है। विलम्ब के कारण ज्यादा देर प्रतीक्षा करने की शारीरिक शक्ति अब नहीं रह गयी है। प्रभु की प्रत्यक्ष कृपा प्रकाश ही इस जन पर हो गयी और शेष जीवन में जितनी बार सप्त पारायण के रूप में प्रभु के चरित्र को पढ़ पाता उससे सवा तीन गुनी संख्या में पढ़ पाऊँगा। जो जनकपुरस्थ में एक दोहा का एक लाख नौ हजार पाठ सप्त सप्ताह की नहीं पढ़ पाता था आज प्रभु ने नवाह्न करने के पक्ष पर हटा कर योग क्षेम के लिये प्रलय के द्वारा स्वयं नवाह्न पाठ कराया इसकी प्रत्यक्ष प्रकाश कृपा है। जय श्री राम श्री रामचरित मानस का चैन बैठ किये गये नियमित पाठ का ही प्रत्यक्ष फल है। कुमारिस्वरूप श्रद्धेय के प्रश्नकर्ता के आग्रह एक नवाह्न करके बन्द कर देना पड़ा

(ब) आज हठात् मेरे पिताजी के सीने में दर्द उठा और उन्होंने मुझे बुलाया। मैं उनका ज्येष्ठ पुत्र हूँ। मेरे जन्म लेते ही उन्होंने मेरे कान में रामायण का प्रथम पाठ सुनाया था। मैं प्रणाम करके उनके पास बैठ गया। उन्होंने मुझे आशीर्वाद दिया और कहा "बेटा, मेरा अन्तिम समय आ गया है। मैं तुम्हें अपनी सारी सम्पत्ति सौंपता हूँ। मेरे बाद तुम्हें ही घर की देखभाल करनी है। अपने छोटे भाई-बहनों का ध्यान रखना। माँ को कभी दुःख मत देना।" इतना कहकर उन्होंने आँखें बन्द कर लीं। मैं समझ गया कि अब वे नहीं रहेंगे। मैं रोने लगा। पड़ोसी दौड़कर आए। उन्होंने पिताजी को देखा और कहा कि वे चल बसे हैं। मैं फूट-फूटकर रोने लगा। माँ को खबर दी गई। वे भी रोने लगीं। सारा घर शोक में डूब गया।

(स) मेरी पत्नी — मानस प्रेम की झलक इसी में है कि पुत्र मानस पाठ में लीन रहा। कंत भाव की उपासिका थी और भगवान शंकर के कई पद रचना की जो कि इसके हाथ से लिखवाया करती थी। प्रयोदशा में तुलसी मन्दिर में भगवान शंकर का इत्र लगाया जाता उस इत्र को प्रसाद रूप में बंटने पर पुजारी ने एक शीशी भर कर दे दिया वह शीशी सँभाल कर रख दी थी और मृत्यु के कुछ दिन पहले हठात मुझे बोली कि मेरी लाश को स्नान करने के बाद शृंगार होने पर यह इत्र लगाकर अर्थी पर लेजाना तब ऐसा किया गया था।

24/1/81 गत कल 'प्रेम दीवाना' केवट (नंदलाल लोधी) को लेकर दूर हुआ। गत रात स्वप्न आया। गंगा किनारे खड़ा हूं। पार जाने के लिये १०/१५ मनुष्य खड़े हैं। इतने में सांवले रंग का एक व्यक्ति आया मेरे से बोला उस पार जाने को नहीं हो? मेरी नाव में चले जाओ। मैंने कहा "मैं भी पार जाने के लिये ही खड़ा हूं"। "ठीक है चले आओ"। उनके पास पहुंचा कर मैं नाव में आया। तब उस व्यक्ति से पूछा "तुम क्या हो?" मैंने कहा "यह मेरी पत्नि मेरे पुत्र पुत्रवधु को भी जाना है"। "ठीक है चले आओ" उन दोनों को पहुंचा कर फिर मैं आया। तब पूछा "तुम क्या हो?" मैंने कहा "मुझे भी उस पार जाना है" उत्तर मिला "ठीक है जाओ" यह घाट ठीक नहीं है उसी घाट से जाओ। नाव वहां लगा देता हूं। उस घाट पर नाव लगी और नाव पर चढ़ कर उस पार मैं पहुंचा। नींद खुली

14/2/81 स्वप्न - sea पर पलाथी मार कर शान्ति से मन पर अपनी दृष्टि को केन्द्रित कर रहा हूं बाएं ओर से बड़े सुन्दर राजस्थानी वेश में हुए एक बच्चा आया तोतली बोली में बोला "गोदी में बैठूंगा" मैंने उसे अपनी बाँयी गोद में बैठा लिया। तुरन्त ही वह दाहिनी ओर से दो राजस्थानी वेश में आया और वैसे ही बोला मैंने उसे दाहिनी गोद में बैठा लिया - अचानक तुरन्त गयी प्रातः स्मरण का तात्पर्य है आत्मा

23/4/81 स्वप्न एक बुढ़ा मनुष्य देखकर कहीं से प्रांगण में दो पात्र आया। एक वर्ष की ले कुछ कह उसे की प्रति सुंदर गौर वर्ण की कन्या। मेरे हाथों पर देकर बोला लो इसे ठीक से रखना मैंने पूछा इसका नाम क्या है "दुर्गा" और कुछ समय होता है पुलिस के वाहन आँखों से ओझल हो रहे हैं कि कैसे यह कन्या दुर्गा इनके यहाँ

31-5 की घटना - इन दिनों प्रभु प्रेरणानुसार समय समय कुछ जगह थोड़े समय के लिए प्रचार किया। इसी प्रचार में एक घटना घटी जिसे प्रभु की ही इच्छा समझ कर लिखना बन्द कर दिया क्योंकि हर घटना में श्री राम का हाथ और उद्देश्य छिपा रहता है। कुछ समय तक तो सम्बन्ध रह गया तब हटात् एक दिन सोचने लगा कि एक विधर्मी नाम से लिखने कारण और समय यही सोचता रहा। मंगल मंगल की मंगल मय प्रेरणा - श्री राम जय राम जय जय राम

(३४६)

18/12/80 जनरंजन स्वभाव प्रभु को

जनरंजन स्वभाव प्रभु राम को।
दे पादुका सन्तोसे भरत को॥१

बालपने जुठन खवायो काग को।
ब्रह्मांड दिखा धरे सिस स्वकर को॥२

त्रसित कौसिक ग्रायो प्रभु ढेन को।
मख रक्षाकर काज साध्यो उन को॥३

पाथर भई ले इच्छा पद परस को।
उधारे ग्रहल्या दे परस पद को॥४

बिबिन फिर दियो दर्स जनकपुरजन को।
धरा कर चुम सन्तोसे सिसुन को॥५

धनु मख रच्यो ले ग्रास प्रभु दर्प को।
जनक पत राख्यो भंजि धनु सम्भु को

ठुमरा सुख दृढ़ संग जान को।
ले साथ राख्यो वन सिता को॥ ७

दीन मान ठाढ़े जोरे कर को।
ले साथ प्रभु सनो सैलखन को॥ ८

ले भेंट ग्राये गुह मिलन को।
पास बैठायो प्रभु निसाद्य को॥ ९

धुलवा पद राख्यो हृद केवट को।
गंग तिर खड़े निहार्‌यो उस को॥ १०

बहु मुनि वे लालायित दर्स को।
वन वन फिर दियो दर्स प्रभु उन को॥ ११

ले दर्स कालना धर्‌यो तन मृग को।
धाय पाछे सनो ले ग्रारत्रि को॥ १२

सुमिरा मृत्यु मुख प्रभु-पद-रेख को।
किये क्रिया प्रभु स्वकर गीध को॥13

भइ सबरि वृद्ध जोहति बाट को।
पधार राये संचित जुठन को॥14

बालि-त्रास नास्यो सुग्रीव को।
दिया छत्र उसे मार बालि को॥15

तज दिया बालि जब चतुरङ्ग को।
परस सिस पढाया स्वधाम को॥16

ग्राचो बिभिसन सरन राम को।
बनायो लंकेस तुरत उसको॥17

ढाढ़ सेतु देखन सिस सिन्धु को।
दिये दरस प्रभु सबजलचरन्ह को॥18

1104
(4)

चला करन युद्ध चक नसे राम को।
पी गयो जोति. प्रभु कुम्भकरी को॥१९

ठानु बैर ब्रह्म जान रान को।
तारे प्रभु सकुल दसानन को॥२०

ऐसो उदार स्वभाव प्रभु ग्रापको।
ठुकरावो न ग्राज 'चातक' को॥२१

(340)

19/12/80

## प्रश्न सुधार

जन रंजन प्रनतपाल प्रभु तुम्ह हो।
क्रिया साध्य तुम्ह कमि रहेव हो॥१

सिर्फ करुनाकर ही प्रपन्नाते हो।
सब साधन हिन प्राणा प्रनत हो॥२

प्रापड़ा प्रभु दूर मिरवारि हो।
जन हित प्रभु उर करुना संचार हो॥
प्रसार

बालि जटायु राम मम प्रश्न सुधार हो।
मन तव पद, रसना 'राम' नाम हो॥४

सिस स्याम सलोना कर कमल हो।
संकर प्राचुरि रस पीसा हो॥५
चातक स्वाति

(1014)

25/12/80

# वरदान

स्वर्ग नर्क कूरम वसु जीव जाता।
प्रपंच लिप्त दोनों घुट जाता।।

चाहुं न सुख जो प्रभु भुलाता।
जाचुं दुःख प्रभु-स्मरन कराता।।

स्मरन राघव को खेंच लाता।
निरारन प्राचे प्रभु दर्श पाता।।

दृग पंचलाउर बन्दी बनाता।
राम राम गा गा रिझा पाता।।

माचन मुक्ति प्रभु सेवा न पाता।
प्रनन्य भक्ति मति प्रभु सेवा कर पाता।

जन्म भक्ति वरदान ही जाचता।
सेवक प्रभु प्रभु पुरुष प्रतिति कर पाता।

(342)

1-48 हर हर महादेव

हर हर हर महादेव जय जय हो।
पार्वतिपति उमेस महेस जय हो॥

पशुपति पंचानन इस जय हो।
रामेस्वर केदारनाथ जय हो॥

त्रिनेत्र शशि सेखर सिव ब्रह्म जय हो
गंगाधर विस्वनाथ जय जय हो॥

गिरजापति गिरिस भव जय जय हो
सदासिव कामदेव विभु जय जय हो॥

जयति प्रभु रुद्र प्रभु सम्भु जय जय हो
प्रासुतोस प्रनटर दानि जय जय हो॥

(क)
1108

मार मद हर मार प्रसंग कियो।
पुनर्मिलन वर दे रति प्रसोच कियो।।

गरल परन कर निस्व इच्छा कियो।
ऐसो करुनासिन्धु नित्यकंठ हो।।

बहु कसुर किया रन माया वस हो।
पाहि भ्रस्ट-प्रतिग्य प्राया प्रनत हो।।

~~प्रप्र~~ कसुर भुलो प्रभु भोले नाथ हो।
राम मिलावो संकर जन्म सफल हो।।

(343)

6+81 बिरद बचालो प्रभो। टेक

सरन ग्राह्या पत रखना प्रभो।
प्रनतपाल नाम बचाना प्रभो॥

छल समान से दी सोहत्व प्रभो।
ग्रधीनस्व से छल न करो प्रभो॥

इस पतित को ना पीसो प्रभो।
पतित पावन नाम बचालो प्रभो॥

चाहो सो करो दास हुं प्रभो।
संकर कर ग्रह ग्रुन निधाना प्रभो॥

वरना बिरद डुबे तिहारि प्रभो।
दरस दे बिरद बचालो प्रभो॥

(३५४)

9+8 निहोरा

होत बिलंबु उतारहि पारू। टेक

पर ब्रह्म राम जन से निहोरा किया।
जन राम लखन सिय गंग पार किया।

पहले प्रभु जन भवसिन्धु पार किया।
परिवार पितर सबको पार किया।

यह जन सरनागत बिरुद निहोर रहा।
प्रनतपाल करुना क्यों रुक रहा॥
करुनानिधान

कालालपुका मम ग्रसे ग्रस रहा।
निबल बेर प्रभु क्यों बिलम्ब हो रहा॥

दर्स दे ग्रसनावे बिलम्ब हो रहा।
सेवक साध पुरो बिलम्ब हो रहा॥

(111)

संकलन लेख 21

10-1-84 प्रेम दीवाना केसर

23-1-84

एक

भक्ति, भक्त, भगवान एवं गुरु ये चारों एक ही हैं। भागवत अपने को एक अबोध बालक और भगवान को अपनी माँ मानता हुआ एक उसी पर पूर्ण विश्वास प्राश्रित रहता है। उसका हृदय वह मंदिर है जहाँ प्रभु का वास सदा रहता है उसका मन वह भ्रमर है जो प्रभु के चरणारविन्दों पर मंडराता रहता है। जिस प्रकार माता अपने अबोध बालक पर स्नेह करने वालों पर फिदा रहती है एवं माता पिता अपने प्रौढ़ संतान की सुकृति सुन कर प्रसन्न रहते हैं उसी प्रकार प्रभु भी अपने भागवतों के गुणगान में अपना ही गुणगान मानते हैं कारण भागवतों की जीवनी में भगवान की महिमा ही तो भरी रहती है। यही कारण है कि हमारे यहाँ हरीश से ही हरिजन में भागवतों की जस गाथा ही भरी रहती गई है। इसलिए

ऐसे अत्यन्त कोटि के भागवत के यशोज्ञान का उपक्रम किया जा रहा है जिसकी बराबरी का सौभाग्य अन्य किसी को प्राप्त हुआ नहीं। त्रेता और द्वापर में अनेकों भागवतों को प्रभु के पद प्रक्षालन का सौभाग्य तो प्राप्त हुआ किन्तु उनका सौभाग्य एवं उद्धार स्वयं तक ही सीमित रहा गया। शबरी के भक्ति में शक्ति ही है जिसने अपने सारे राक्षस कुल का उद्धार कराया। इनकी भक्ति में ऐसा पुनने में नहीं आया जिसने प्रभु के चरणों को प्रभु की प्रार्थना पर धो धो कर चोकर चोकर अमृत चरणोदक को स्वयं पीया हो अपने सारे परिवार को पिला कर तार दिया हो यह है नहीं उस चरणोदक से अपने पितरों का तर्पण कर सारे पितरों तक को तार दिया हो। यह कीर्ति तक।

प्रेमी भागवत का अपने प्रेमास्पद भगवान के सम्मुख बालहठ का यह अनुपम प्रसंग कहनानिधान को कहना प्रवाह का द्योतक है भागवत जन इसमें आनंद की हिलोरें लेते लखते हैं। एक ओर है सारे विश्व प्रपंच को दो डेग में नापने

वल्लभ त्रिभुवनपति इमापति, रमा, शेष के
ग्रुं श्री जदुनंदलाल एवं निमाईं राजा गुह
ग्रोर दूसरी ग्रोर है एक ग्रति दरिद्र निषाद
केवट जो बड़ी कठिनता से परिवार का भरण
पोषण कर पाता है। केवट की राम द्वारा
विश्वामित्र की यज्ञ रक्षा, ग्रहल्या उद्धार,
जनकपुर में धनुष तोड़ कर समस्त राजाग्रों
से ग्रधिक बलवान होने की ख्याति प्राप्त
करना, परशुराम जैसे क्रोधी ग्रौर ~~ग्रक्र~~ पराक्रमी
का मानभंग करने का प्रसंग सुन चुका है उसके
दिल में यह दृढ विश्वास जमा हुग्रा है कि श्री
राम भगवान ही हैं। प्रभु पद में उसका ग्रतीव
प्रेम है उसने मनोकामना एवं योजना बना रखी
है कि प्रभु का चरणोदक पीकर, परिवार वालों
को पिला कर एवं उससे पितरों का तर्पण करके
सब को तार देना है ग्रौर प्रभु को ग्रपने कंधे पर
चढा कर नाव पर चढाना, ताकि प्रभु के चरणार-
-विन्दों का स्पर्श उसके वक्षस्थल से हो एवं ~~उसके~~
इसके हाथ उसके शीश पर प्रभु कर रखेंगे तभी
ग्रौर इस तरह उसका जन्म सफल हो जायगा।

केवट प्रसंग से यह स्पष्ट है कि वह बहुत ही उच्च तपकोटि का भक्त था ऐसे भाइयत को इसवास को जाच बाकी होत कि श्रीराम बन जायेंगे उसे इस स्थान से गंगा पार करेंगे कोई प्रश्न चर्चा की आवश्यकता नहीं है ऐसे दृष्टांत रामचरित में अनेक पाये जाते हैं इसमें शंका की गुंजाइश नहीं। केवट यह भी जानता था कि प्रभु अपने जन पर कभी क्रोध नहीं करते। यहां राजा प्रजा की शंका नहीं है। प्रेमी प्रेम के नशा होकर प्रेमास्पद जगत्पिता प्रभु के सामने बालहठ करके अचलता दुःप्रयोग किया है उधर प्रभु भी प्रीति प्रेम वश उसके केवट देह पर ध्यान न देकर उसके हृदयस्थ प्रेम की उच्च भावना को महत्ता देकर उसकी संचित कामना पूरी करना चाहते हैं एवं उसकी "प्रेम लपेटी अटपटी बातों" को उसी प्रकार आदर दे रहे हैं जिस प्रकार माता पिता अपने अबोध संतान की तोतरी बातों का आनन्द लेते हैं। तभी तो सारे विधि प्रपंच को दो ही डेग से नाप लेने वाले एवं गंगा जिसके चरणों से ही निकली है उसी गंगा के तट पर उस पार जाने के लिये केवट से निहोरा कर रहे हैं। अपने बनवासी प्रेमी भक्तों की इच्छा पूरी करने के लिये हौले हौले गमन कर रहे हैं। वन प्रवेश-द्वार तुलसी इस घाट पर

प्रेम दिखाने के बदले की इच्छा पूरी कर रहे हैं। मान
मांग रहे हैं प्रेमी के बदले प्रभु कहते हैं आप तो
ले गंगाजल ही वापस है ना - मेरे मन में आने
से मेरी सारी शर्तें पूरी करनी होंगी। प्रभु ने
कहा कि जिये, मेरे सामने इसे छोड़ दो। कुरु वंश
एक संतान है मैं तुम्हें देता हूं नई एक कन्या हर
दी जाती है। विश्वामित्र के दिए को जाकर दे दो
हूं कि सुविधा तेरी शर्त पूरी किसे मैं नाव पहुंचाई
न चढ़ाता। प्रभु ने स्वीकार किया मैं तुम्हारी नाव से पार
जाऊंगा। क्योंकि उन्हें तो भक्त की इच्छा पूरी करने
का खुद ही शौक है। तेरी शर्त क्या है बोल मैं पूरी
करूंगा। सत्यवती के ये वचन सुनकर निश्चिंत हो गई।
अब तो सारी मनोकामना पूरी हो जाएगी। कहता है
भक्त मेरे बड़े प्रिय हैं, मेरी प्रार्थना सुन लीजिये। मैंने
सुना है तेरे मरने का आधार है जिसका सभी
करते हैं छुते छुते डरते नारी वस्त्र कर दुख देते
हैं सौतापन दूर कर देते हैं। पाषाण को प्रहलाद
बना कर छोड़ डाला ना पूरे पत्थर तो
पत्थर ही है। जब पत्थर ही सजीव हो जाता है तब
यह नाव लकड़ी काठ की ही बनी हुई है पुनः इसे

एकदम
वर्षा ने जल ले रहे रहते नीरस भी हो गयी पत्थरों
इसकी क्या सुलना। ग्रेरे मइया तुम्हारी मस्त यह है
मार्ग में तो बहुत से पत्थरों का तुम्हारे शरीरों से
स्पर्श हुआ। रक्तन हो सजीव नहीं हुई। मुनि ने श्राप
देकर इसको पत्थर बना डाला और फिर तुमने
उसके बारे में पूछकर स्पर्श किया तो वह नारी बन
गयी। ग्रेरे मेरी को भी तुम चुल्ला कर स्पर्श करके
जाओ। क्या पता यह भी मुनि के द्वारा श्राप से काठ बनी
हुई हो और तुम्हारी चरण रज से उसकी तरह मेरी
भी बन जाय। ग्रेरे भाई वर्तमान परिवार का ही
मरण पोषण बड़ी मुश्किल से कर पा रहा हूं एक
ग्रौरत भी मेरे गले पड़ जायगी तो एक तो सौतिया
डाह का वैर शुरू हो जायगा। परिवार भी
बढ़ जायगा ग्रौर साथ ही साथ ग्रार्थिक उपार्जन
का साधन घट जाएगा नाम भी डूब जाएगी
इसके सिवाय दुसरा कोई भी धंधा मैं जानता ही
नहीं इसलिये भइया तुम्हारी बड़ी जीजी का
ऊंचा कौन सा रोजगार नहीं* सरकार! ग्राप का
नाम तो बड़ा गंगा पार जाना है तो ग्राप खुद्य।
दे दो कि गंगा मैया कर ग्राप के मरों को
* नाव चलाई से भी से बरबाद हो जाएंगे
'बाद' पड़ जाएगी

मैं प्रभु कहूँ
कहूँ मैं पर प्रभु कहूँ लुँ किन्तु इसके बाद
आपको चरणों को जरा भी न छू सकने की नहीं
दुःखी कारण गीले मैदान में तो चुल्हा फिर से चिपट
हो जायगी और दशरथ ज्यों की त्यों ही नदी रह
जायगी प्रतः आपको अपने कंधों पर बैठाकर
नाव पर चढ़ा दुंगा तब मुझे किसी किस्म की
चिन्ता नहीं रहेगी। मैं आपके राजा गुह के सामने
आपके पिता महाराज दशरथ की सौगंध खाकर
कह रहा हुँ यह मेरा दृढ़ निश्चय है उपेक्षा शर्त
पूरी हुए बिना आपको नाव पर नहीं चढ़ाने का।
महाराज भी सत्य प्रतिज्ञ हैं और उनकी प्रतिज्ञा
पूरी करने ही तो आप वन त्याग कर आ पड़े हैं तो
यहां आपका दास भी सत्य प्रतिज्ञ है आप मेरी
मनोकामना पूरी करने की कृपा करें। आपसे
वनवासी प्रत्येक भक्त की मनोकामना पूरी
करने ही तो वन को जा रहे हो न यहां वन के
द्वार पर ही सुरसरि तट पर मेरी मनोकामना पूरी
करने का दान देकर आपकी करुणा प्रसारित
करने का पुण्य प्राप्त हो जाय प्रभो! मैं सच
कह रहा हुं मैं उतराई नहीं लुंगा और न ही

छुड़ाने के लिये ~~कुछ~~ कुछ भी मन को नियन्त्रण हो
कहता कि वह आपके चरण धो कर आपके
साथ सम्बन्ध स्थापित करने को कह रहा
पुरोहित है। आपका भेद [illegible] आपकी
शक्ति नहीं जानियेगा तो मैं भेद खोल दूंगा फिर आप
को मत दोष दीजियेगा क्योंकि मैं जानता हूं आप तीनों
कौन हैं। आप कृपा कर मेरी नाव से दूर हट
जाइये कहीं हवा से उड़कर आपकी चरण रज इस
नाव का स्पर्श न करले, सब खेल ही बिगड़ जायगा मैं तो
लुट जाऊंगा। पार जाने की गरज आपको है अतः जब
तक आप अपनी ओर से स्पष्ट आज्ञा नहीं देते
कि तुम ले चलो मैं नाव को नहीं छोड़ूंगा कि कहीं यह स्पष्ट है कि बिना पैर
पखारे नाव पर चढ़ाने का न है। आप जितनी
देर करेंगे मेरा उतना ही लाभ है अंतः आपकी
मर्जी रहे चाहे न रहे तो आपको ही होगा
आपके पैरों के पैर खड़े खड़े पीड़ा से लाल हो गये
हैं मुझे पैर पखारने की आज्ञा दे दीजिये। इतना
कह कर केवट हठ कर के चुपचाप
खड़ा हो गया ~~खड़ा हो गया~~ खड़ा हो गया।

"~~माझी नाव ..... साची कहे~~ (२१४)" (२-१००)

पिता दशरथकी सौगंध एवं प्रभु श्रीराम के पुनि केवट के हठीलेपन एवं मतवादी ~~से~~ भगवतें के प्रभाव से लखनलाल की मौहें टेढ़ी हो गयीं, आंखों में रोष भर आया, पुनि उनकी दृष्टि तीर पर गयी तब केवट ने कहा "लखनलाल का मुझे तीर, हाय मार डालने का भय मुझे तनिक भी नहीं है मेरे तो दोनों ही हाथों में लड्डू हैं यदि तो प्रभु के पद प्रक्षालन करूंगा यदि सीता सहित ~~प्रभु~~ प्रभु और जगन्नाता के सपुत्र मुरारि तट पर प्रभु के प्रभुत्व द्वारा प्रभु-पद-प्रक्षालन की दीन मांग करते के प्रपंच में मैं नाट जाऊंगा। इन दोनों ही हालतों में मेरा तो उद्धार हो ही जायगा जन्म सुफल हो ही जायगा। पर मेरा यह सत्य प्राग्रह (दृढ़) है कि प्रभु के पैर पखारे बिना तीनों को मैं अपनी नाव पर तो प्रत्यक्ष किसी भी हालत में नहीं बैठाऊंगा क्या नदी "नहीं तीर ..... पाहू उतारि हौं" (२-१००)। इतना प्रण कर यह केवट सत्याग्रही बनकर प्राणों की बाजी

लगा कर सत्याग्रह करती हुई चुपचाप खड़ा हो जाता है (वर्तमान युग में ही सत्याग्रह की सम्भावना में इतिहास कर ली खाते तो अंग्रेज जैसी क्रूर सरकार को भी झुक कर भारत छोड़ देना पड़ा तब सत्याग्रही परम भक्त की प्राणों की बाजी लगाने पर कैसे नहीं द्रवित होंगे द्वारकाधीश जिनके हृदय में करुणा का सागर भरा हुआ है प्रह्लाद समर्पित किये बिना कैसे रह सकते) इतने देर तक तो प्रभु ने करुणा से द्रवित हुए चुपचाप खड़े रहकर प्रह्लाद के प्रेम भक्ति की घुट्टी पड़ी नारी युक्त बालक का रसास्वादन करते रहे। उसकी मनोकामना पूरी करने का उपयुक्त विचार कर प्रभु प्रह्लाद समर्पण कर देते हैं और कंवर की माधुरी का रसविवेचन के लिये लखन की ओर देखकर हँस पड़े जिससे उपयुक्त क्रोध को शान्त कर इस प्रबन्ध में शामील हो जाय।

"मुनि कंवर के वैन प्रेम लपेटे सुहावने।
विहसे करुनाऐन चितइ जानकी लखनलाल।
लखन और जानकी जी की ओर (३-१००)
प्रभु के देखने के कई कारण भावज्ञ के विद्वान लेखक ने कहा

करते हैं, उनके ऐसे कुछ वचन नीचे लिखे जा रहे हैं :-

(1) एक बार जानकी जी ने कहा है, "हे बहुत अच्छे मुझे ऐसे भोजन प्राप्त करने के लिये प्रभु, निश्चित ही प्रयत्न करना चाहिये। (2) एक बार मुझे प्रातों की बातें लगाई थी तब यह जानकर ही मैंने कहा होगा। (3) और "वन गमन के समय" की तब जानकि देवर प्राण (4) यह सोचकर ही मैंने कहा होगा। (5) इसी प्रकार इसने भी दो बार अपने नाती लगाये हैं मुझे पाने के लिये पुत्र प्राप्ती जब इसके पहले के सात जन्म में यह कसाई था और साधु के कहने पर वादा किया था कि अगले जन्म में इस जन्म में चराने वाली चिड़िया को मारकर साधु के पास पहुँचा देना किन्तु ऐसी चिड़िया की सृष्टि ही विधाता ने नहीं करने के कारण ऐसी अपहानी चिड़िया को पकड़ पाया तब गंगा तट पर चिता बनाकर अपने शरीर त्यागने को तैयार हुआ तब वैसी चिड़िया बनकर इसके प्राणों की रक्षा करनी पड़ी थी कि जब हनुमंत चतुर्भुज रूप धारण किया तब उसके मुंह से